महर्षि दयानन्द सरस्वती की
उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा
का मुखपत्र

ओ३म्

विद्याविलासमनसो धृतशीलशिक्षाः,
सत्यव्रता रहितमानमलापहाराः।
संसारदुःखदलनेन सुभूषिता ये,
धन्या नरा विहितकर्म परोपकाराः।।

वर्ष : ६३ **अंक** : १८
दयानन्दाब्दः १९७
विक्रम संवत्: भाद्रपद शुक्ल २०७८
कलि संवत्: ५१२२
सृष्टि संवत्: १,९६,०८,५३,१२२

सम्पादक
डॉ. सुरेन्द्र कुमार

प्रकाशक- परोपकारिणी सभा,
केसरगंज, अजमेर- ३०५००१
दूरभाषः ०१४५-२४६०१६४

मुद्रक-मन्त्री, परोपकारिणी सभा
वैदिक यन्त्रालय, अजमेर।
दूरभाष : ०१४५-२४६०८३१

परोपकारी का शुल्क
भारत में
एक वर्ष-३०० रु.
पाँच वर्ष-१२०० रु.
आजीवन (१५ वर्ष) -३००० रु.
एक प्रति - १५/- रु.
विदेश में
वार्षिक-५० यू.के. पाउण्ड/८० यू.एस.डॉलर
द्विवार्षिक-९५ पाउण्ड/१५२ डॉलर
त्रिवार्षिक-१४० पाउण्ड/२२५ डॉलर
आजीवन (१५वर्ष)-५००पा./८०० डॉ.
एक प्रति - ३ पाउण्ड
एक प्रति - ४ डॉलर

वैदिक पुस्तकालय : ०१४५-२४६०१२०
ऋषि उद्यान : ०१४५-२६२१२७०

RNI. No. ३९५९ / ५९

परोपकारी

सितम्बर द्वितीय २०२१

अनुक्रम

०१. देव, दानव, असुर, राक्षस कौन?...	सम्पादकीय	०४
०२. वैदिक पुस्तकालय द्वारा प्रकाशित नया साहित्य		०६
०३. अग्नि सूक्त-१२	डॉ. धर्मवीर	०७
०४. कुछ तड़प-कुछ झड़प	प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'	१०
०५. ज्ञान की ज्योति	पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय	१६
०६. सांसारिक सुख का मार्ग भटकाने...	कन्हैयालाल आर्य	२१
०७. योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर		२६
०८. १३८ वाँ ऋषि बलिदान समारोह		२७
०९. वेदगोष्ठी-२०२१		२८
१०. संस्था की ओर से...		३१
११. 'सत्यार्थ प्रकाश' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति		३४

www.paropkarinisabha.com
email : psabhaa@gmail.com

उपनिषद्, दर्शन, प्रवचन आदि सुनने हेतु बटन दबाएँ
www.paropkarinisabha.com→gallery→videos

'परोपकारी' पत्रिका में प्रकाशित सभी आलेखों में व्यक्त विचार लेखकों के निजी हैं। इन्हें सम्पादकीय नीति नहीं समझा जाये।
किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्यायक्षेत्र अजमेर ही होगा।

सम्पादकीय

देव, दानव, असुर, राक्षस कौन?
कोरोना ने कराई पहचान

प्राचीन साहित्य और इतिहास में देवों, दानवों, असुरों और राक्षसों की पर्याप्त चर्चा आती है। आलंकारिक रूप में देवों का चित्रण एक भद्र व्यक्ति के रूप में और दानवों, असुरों तथा राक्षसों का चित्रण विकृताकार एवं भयंकर मुद्रा में मिलता है, क्योंकि ये लोग समाज को भय, कष्ट, यातना, हत्या, हानि, अत्याचार, अन्याय, छल, कपट, धोखा देने के प्रवृत्तिवाले दुर्जन हुआ करते हैं। इस कारण ये विकृत लोग होते हैं। भद्र पुरुष प्रायः इनसे भयभीत ही रहा करते हैं। इनके झमेले से बचने के लिए भद्रपुरुषों में एक उक्ति प्रचलित है- ''दुर्जनं प्रथमं वन्दे सज्जनं तदनन्तरम्।'' अर्थात् मैं सज्जन से पहले दुर्जन को नमस्कार करता हूँ; क्योंकि दुर्जन अपने हित के बिना भी हानि पहुँचाने के स्वभाववाला हुआ करता है। इनका वर्णन पढ़ते हुए लोग अक्सर कहा करते हैं कि हमने देव, दानव, असुर, राक्षसों को कभी साक्षात् नहीं देखा। वस्तुतः हम देखते तो रोज हैं परन्तु पहचानते नहीं, क्योंकि ये लोग आकृति और रूप में हम जैसे रूप-रंग तथा हमारे ही समाज के बीच से होते हैं, अतः इनको आचरण, चरित्र और व्यवहार से ही पहचाना जाता है। आकृति की पहचान रखनेवाले लोग इनकी आकृति से झलकती धूर्तता, अपराधी एवं खूंखार वृत्ति को भी जान लेते हैं। पुलिसजनों और अपराध विशेषज्ञों को इस कार्य में दक्षता प्राप्त होती है। किन्तु कोरोना महामारी ने अब उनका रूप सबको दिखा दिया है। जैसे वर्षा के मौसम में साँप-सपोले जगह-जगह प्रकट होकर मनुष्यों को डसा करते हैं वैसे ही कोरोना की सुनामी में स्थान-स्थान पर प्रकट होकर इन लोगों ने अवसर ढूंढ-ढूंढकर अपनी दानवी और राक्षसी करतूतों का बड़ी बेशर्मी के साथ प्रदर्शन किया है। बहुत-से असुर, दानव और राक्षस पुलिस की पकड़ में आ गये, परन्तु जो ज्यादा शातिर थे वे बच निकलने में सफल रह गये।

पिछले डेढ़ वर्ष से न केवल भारत में अपितु सम्पूर्ण विश्व में कोरोना महामारी का भयंकर प्रकोप फैला हुआ है। लगभग सब गतिविधियाँ निरस्त पड़ी हैं। सबके जीवन की सामाजिकता सिमट गई है। अपने-पराये के भेद की सीमाएँ धुंधली होती जा रही हैं। हर कोई भयाक्रान्त है। संक्रमण से सुरक्षित बचने हेतु लोग घरों में तालाबन्द हैं। संक्रमित लोग जीवन बचाने के लिए संघर्ष कर रहे हैं। संघर्ष में रोगियों की सांस फूल रही है, सरकार की सांस फूल रही है, व्यवस्था की सांस फूल रही है, डॉक्टरों की सांस फूल रही है। उपचार के लिए हस्पताल, बिस्तर, दवाइयाँ, इन्जेक्शन, ऑक्सीजन, डॉक्टर, नर्स सबकी कमी हो रही है। विपदा से चारों ओर हाहाकार मचा हुआ है। सब ओर अफरा-तफरी है। उपचार एक संयोग रह गया है। उपचार पाकर भी कोई जीवित रह पायेगा या नहीं, यह भी निश्चित रूप से कोई बता पाने में समर्थ नहीं है। मनुष्य और प्रकृति के बीच कँपा देनेवाला अविस्मरणीय संघर्ष छिड़ा है। स्वयं को सर्वोत्कृष्ट और शक्तिशाली समझनेवाला मनुष्य विवश है, असहाय है। ऐसे अभूतपूर्व संकटपूर्ण भयावह वातावरण में, बहुत-से डॉक्टर, नर्स, अस्पतालकर्मी, सफाईकर्मी, पुलिस और प्रशासनिक अधिकारी एवं कर्मचारी आदि अपने जीवन का खतरा उठाते हुए पूरी निष्ठा से लोगों का जीवन बचाने में जुटे हैं, परन्तु इन्हीं लोगों में से कुछ ऐसे भी लोग मीडिया द्वारा नोटिस में लाये गये और पुलिस द्वारा भी पकड़े गये हैं, जिन्होंने अपने कर्त्तव्य की घोर अवहेलना करते हुए रोगियों की जिन्दगी के साथ खिलवाड़ भी किया है। रोगी बचाव की पुकार लगाते रहे, गिड़गिड़ाते रहे, तड़पते रहे और आखिर में वे दम ही तोड़ गये। किसी ने अपराध भावना के वशीभूत होकर कालाबाजारी करके इन्जेक्शन ही बेच डाले, तो किसी ने ऑक्सीजन सिलेण्डरों का सौदा किया, तो किसी ने पाप के वशीभूत होकर महिलाओं के शोषण का कुकर्म ही कर डाला या शोषण का प्रयास किया। किसी डॉक्टर ने अपने लोगों को लाभ पहुँचाने के लिए शय्या खाली करने हेतु कोरोना मरीजों को लगे ऑक्सीजन

सिलेण्डर बन्द करके उनको योजनापूर्वक यमलोक पहुँचा दिया। ऐसी विपत्ति और कष्टप्रदकाल में भी जिनकी ऐसी पापमयी प्रवृत्ति रही है, वे मनुष्य कहलाने के अधिकारी तो बिल्कुल भी नहीं हैं। वे या तो असुर हैं, दानव हैं अथवा बड़े अपराधी राक्षस हैं।

प्राचीन साहित्य और इतिहास में देवों, दानवों, असुरों तथा राक्षसों के लक्षण अर्थात् उनकी पहचान भी बतायी है। आप भी उनको आसानी से पहचान सकते हैं। 'निरुक्त' नामक वेदांग शास्त्र में आचार्य यास्क ने उन सबकी परिभाषा दी है। देवों की परिभाषा करते हुए वे लिखते हैं- ''देवो दानात्'' अर्थात् जो भी व्यक्ति स्वार्थ त्यागकर उपकार की भावना से अपने हिस्से में से तन, मन, धन, भोजन, वस्त्र, समय, श्रम, विद्या आदि का दान करके किसी योग्य पात्र का सहयोग करे, उसको देवता या देव कहते हैं। कोरोना विपदाकाल में, साधारण जनता में बहुत-से समाजसेवी लोग, डॉक्टर और संगठन सामने आये हैं जिन्होंने अपना स्वार्थ त्यागकर किसी-न-किसी प्रकार से तन-मन-धन से कोरोना रोगियों का सहयोग करके उपकार का कार्य किया है। जिन्होंने ईमानदारी से अपने कर्त्तव्य का पालन किया है, ऐसे लोगों, डॉक्टरों और संगठनों को हम देव या देवतुल्य कह सकते हैं। कवि भर्तृहरि ने ऐसे स्वार्थत्यागी और उपकारकर्त्ता लोगों को 'सत्पुरुष' नाम से प्रशंसित किया है। ऐसे लोग वास्तव में मानव कहाने के अधिकारी होते हैं। ऐसे ही लोगों से समाज और देश सुख-शान्ति तथा निश्चिन्ततापूर्वक चला करता है।

दानवों का अन्य नाम 'असुर' है। असुर की परिभाषा है- 'असुरता:' अर्थात् जो दूसरों के सुख-दु:ख में भागीदारी न करके केवल अपने प्राण-पोषण में तत्पर रहते हैं, उनको दानव या असुर कहते हैं। मनुष्य सामाजिक प्राणी है। साथ मिलकर चलने का नाम समाज है। जो अच्छे कार्यों में समाज के साथ भावनात्मक मेलजोल बनाकर नहीं चलता, वह अपने सामाजिक मानवीय कर्त्तव्य का निर्वाह नहीं करता। किसी भी काल में जो व्यक्ति जमाखोरी कर दूसरों के हित पर घात करके स्वार्थ को सिद्ध करता है, उसको शास्त्रों ने असुर अर्थात् दानव कहा है। कोरोना काल में कितने ही ऐसे लोगों और व्यवसायियों ने रोगियों के लिए उपयोगी दवाइयों, ऑक्सीजन सिलेण्डर, इन्जेक्शन आदि वस्तुओं की स्वार्थ साधन के लिए जमाखोरी की और उनकी कालाबाजारी की। उन लोगों ने ऐसा करके दूसरों को आत्मिक पीड़ा तो दी ही है, उनकी जिन्दगी की कीमत पर यह पाप किया है। इस कारण वे मानव नहीं, 'दानव' हैं। वे भले ही कानून-व्यवस्था के दण्ड से बच गये हों, किन्तु उनको ईश्वर की न्यायव्यवस्था से इसी या अगले जन्म में उचित दण्ड अवश्य मिलेगा। ईश्वर की न्याय-व्यवस्था यही है।

मनुष्य समाज में राक्षस कोटि के व्यक्ति समाज के सबसे बड़े शत्रु और समाज के लिए अभिशाप हुआ करते हैं। आचार्य यास्क इनकी पहचान बताते हुए कहते हैं- ''**रक्ष:रक्षितव्यभस्मात्, रहसि क्षणोति वा**'' अर्थात् राक्षस को राक्षस इसलिए कहते हैं, क्योंकि उससे हर समय रक्षणीय व्यक्ति और वस्तु की रक्षा करनी होती है। वह मौका मिलते ही सबको हानि पहुँचा सकता है। ऐसा व्यक्ति एकान्त या मौका मिलते ही चोरी, डकैती, हत्या, हानि, बलात्कार, अपहरण, भयादोहन (ब्लैकमेलिंग), तस्करी आदि सभी प्रकार के अपराध कर लेता है। उसे किसी के जीवन-मरण, सुख-दु:ख की चिन्ता नहीं होती, केवल अपने स्वार्थ की ही चिन्ता होती है। कोरोना महामारी में कितने ही लोग राक्षसपुत्रों की तरह प्रकट हो गये और उन्होंने अवसर पाकर नकली दवाइयाँ, नकली इन्जेक्शन, नकली ऑक्सीजन सिलेण्डर तैयार करके बेचे और न जाने कितने रोगी स्त्री-पुरुषों और बालकों की जान ले ली। वो लोग भी इसी निम्न श्रेणी में आते हैं जिन्होंने प्रयोग हुए सीरिंज, दस्ताने, मुखपट्टी आदि को पुन: बेचकर लोगों को संक्रमित करने का पाप किया है और उनकी जीवनलीला नष्ट की है।

उनका कमाया हुआ धन निरीह लोगों के खून से सना हुआ है। उससे उन्हें कभी सुख प्राप्त नहीं हो सकता। उसका ईश्वरीय दण्ड उन्हें इस या परजन्म में अवश्य भोगना होगा। साथ ही उन्हें इस और परजन्म में सुख-शान्ति भी नहीं मिले सकेगी। ये समाज के लिए हानिकारक वे लोग हैं जो समाज और देश में भय, दुख और अशान्ति का कारण बनते हैं। कवि भर्तृहरि ने ऐसे लोगों को

'मानुषराक्षस' अर्थात् मनुष्य के रूप में राक्षस कहा है-

''तेऽमी मानुषराक्षसाः परहितं
स्वार्थाय निघ्नन्ति ये।
ये तु घ्नन्ति निरर्थकं परहितं
ते के न जानीमहे।'' (नीतिशतक ७५)

''जो लोग अपनी स्वार्थसिद्धि के लिए किसी भी तरह से दूसरों के हितों की हानि करते हैं, दूसरों की हत्या आदि करते हैं, वे मनुष्य के रूप में राक्षस होते हैं।''

भर्तृहरि ने उक्त श्लोक में चतुर्थ प्रकार के एक अन्य वर्ग का भी उल्लेख किया है, जो इन सबसे बढ़कर दुष्ट होते हैं। वे इतने पतित हैं कि उनका नामकरण करने में भर्तृहरि स्वयं भी असफल रह गये। भर्तृहरि कवि कहते हैं कि मैं नहीं समझ पा रहा कि उनको क्या नाम दूँ? समाज में चौथी कोटि के ये वे लोग होते हैं जो किसी स्वार्थ के बिना भी दूसरों की हानि या हत्या करते हैं। वे निर्दय, क्रूर, निर्मम स्वभाव के होते हैं। वे परपीड़ा, दूसरों की हानि और यातना में आनन्द का अनुभव करते हैं। जब अभी तक उनको कोई नाम नहीं मिला है तो अब पाठक उन्हें हिन्दी में **'नरपिशाच'** और उर्दू भाषा में **'दरिन्दा'** या **'शैतान'** कहकर पुकार सकते हैं और ऊपर वर्णित क्रूर आचरणों से उनकी पहचान भी कर सकते हैं।

डॉ. सुरेन्द्र कुमार

वैदिक पुस्तकालय द्वारा प्रकाशित नया साहित्य

१. महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ **पृष्ठ :** २१६ **मूल्य :** १५०

यह पुस्तक महर्षि के सभी शास्त्रार्थों का संग्रह है। यद्यपि सभा यह संग्रह दयानन्द ग्रन्थमाला में भी प्रकाशित कर चुकी है, पुनरपि पाठकों की सुविधा के लिए इसे पृथक पुस्तक रूप में भी प्रकाशित किया गया है।

२. महर्षि दयानन्द की आत्मकथा **पृष्ठ :** ८० **मूल्य :** ३०

महर्षि दयानन्द ने अलग-अलग समय व अवसरों पर अपने जीवन सम्बन्धी विवरण का व्याख्यान किया है। जिनमें थियोसोफिकल सोसाइटी को लिखा गया विवरण, भिड़े के बाड़े में दिया गया व्याख्यान एवं हस्तलिखित विवरण आदि हैं। इन सभी विवरणों को ऋषि के हस्तलिखित मूल दस्तावेजों सहित सभा ने एकत्र संकलित किया है।

३. काल की कसौटी पर **पृष्ठ :** ३०४ **मूल्य :** २००

यह पुस्तक डॉ. धर्मवीर जी द्वारा लिखित सम्पादकीय लेखों का संकलन है। विषय की दृष्टि से इस पुस्तक में उन सम्पादकीयों का संकलन किया गया है, जिनमें धर्मवीर जी ने आर्यसमाज के संगठन को मजबूत करने एवं ऋषि के स्वप्नों के साथ-साथ उन्हें पूरा करने का मन्त्र दिया है।

४. कहाँ गए वो लोग **पृष्ठ :** २८८ **मूल्य :** १५०

आर्यसमाज या आर्यसमाज के सांगठनिक ढांचे से बाहर का कोई भी ऐसा व्यक्ति जो समाज के लिए प्रेरक हो सकता है, उन सबके जीवन और ग्रहणीय गुणों पर धर्मवीर जी ने खुलकर लिखा है। उन सब लेखों को इस पुस्तक के रूप में संकलित किया गया है।

५. एक स्वनिर्मित जीवन - मास्टर आत्माराम अमृतसरी **पृष्ठ :** १७४ **मूल्य :** १००

आर्यसमाज के आरम्भिक नेताओं की सूची में मास्टर आत्माराम अमृतसरी का नाम प्रमुख रूप से आता है। प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु द्वारा लिखी अमृतसरी जी की यह जीवनी पाठकों को आर्यसमाज के स्वर्णयुग से परिचित कराएगी।

अग्नि सूक्त-१२

प्रवचनकर्त्ता- डॉ. धर्मवीर
लेखिका - सुयशा आर्य

प्रिय पाठक! परोपकारी पिछले कई वर्षों से आपकी सेवा में डॉ. धर्मवीर जी के वेद प्रवचनों को प्रकाशित कर रहा है। गत अंक में मृत्यु सूक्त का अन्तिम व्याख्यान प्रकाशित हुआ। आप सभी ने उक्त सूक्त को उत्सुकतापूर्वक पढ़ा। आप सबकी इस वेद-जिज्ञासा को ध्यान में रखकर शीघ्र ही यह पुस्तक रूप में भी प्रकाशित कर दिया जायेगा। इस अंक (मार्च प्रथम) से ऋग्वेद के प्रथम सूक्त 'अग्निसूक्त' की व्याख्यान माला प्रारम्भ की जा रही है। प्रवचनों को लेखबद्ध करने का कार्य डॉ. धर्मवीर जी की ज्येष्ठ पुत्री श्रीमती सुयशा जी ही कर रही हैं। -सम्पादक

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि। स इद्देवेषु गच्छति।।

इस वेद-ज्ञान की चर्चा में हम ऋग्वेद के पहले मण्डल के पहले सूक्त के चौथे मन्त्र पर विचार कर रहे हैं। इस चौथे मन्त्र का ऋषि मधुच्छन्दा, देवता अग्नि, छन्द षड्जः तथा स्वर गायत्री है। पहले तीन मन्त्रों में अग्नि के बारे में कहा गया था, इस मन्त्र में अग्नि से कहा गया है। वहाँ अलग-अलग विभक्तियों का प्रयोग था- **अग्निमीळे पुरोहितम्** अग्नि की स्तुति करता हूँ। **अग्नि पूर्वेभिः ऋषिभिः** अग्नि पहले ऋषियों के द्वारा स्तुति किया गया है। **अग्निना रयिमश्नवत्** अग्नि से रयि, ऐश्वर्य को प्राप्त किया जाता है। लेकिन इस मन्त्र में कहा है, '**अग्ने**', **हे अग्ने**! और यह जो शब्द है- हे अग्ने यह किसी दूरवाले के लिये नहीं होता, यह जड़ के लिये भी नहीं है। जड़ के लिये होगा तो आलंकारिक रूप में होगा, उपलक्षण के रूप में होगा, भान करके होगा। जैसे मैं किसी मूर्ति को देखकर कहता हूँ, भगवान् मानकर कहता हूँ, लेकिन सम्बोधन मैं तब करता हूँ, जिसको मैं बुलाता हूँ। वह चेतन है इसलिये मैं उसे बुला रहा हूँ। इस मन्त्र में अग्नि के लिये जो शब्द प्रयोग किया गया है वह है, अग्ने। सम्बोधन के रूप में और उस सम्बोधन के साथ बताया गया है कि अग्नि! आप कैसे हो, आप क्या करते हो तो क्या हो जाता है।

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि।
स इद्देवेषु गच्छति।

हे अग्ने! जब हम कोई काम करते हैं और उस काम में तुम शामिल हो जाते हो, तो वह काम ऊँचाई तक चला जाता है, आसमान को छू लेता है। जिस यज्ञ में तुम सम्मिलित हो जाते हो, उस यज्ञ की ज्वालाएँ अन्तरिक्ष तक जाती हैं, उसकी ज्योति, उसका तेज, उसकी ऊर्जा सबको प्राप्त होती है। यहाँ कहा है, **स इद्देवेषु गच्छति।** मैं जिस यज्ञ को कर रहा हूँ, जिस यज्ञ को करके मैं, देवताओं को सन्तुष्ट करना चाहता हूँ, प्रसन्न करना चाहता हूँ, पुष्ट करना चाहता हूँ, पाना चाहता हूँ, उसका उपाय क्या है? उसका उपाय है कि उस यज्ञ में मैं तुझे सम्मिलित कर लूँ। जिस यज्ञ में मैं ईश्वर को सम्मिलित कर लेता हूँ वह मेरा यज्ञ देवताओं तक चला जाता है। और कोई उपाय नहीं है देवताओं तक जाने का, क्योंकि देवों में जो महादेव है, वह तो ईश्वर है, सब देव उससे नीचे हैं, उसके आधीन हैं। जब मैं परमेश्वर के देवत्व में सम्मिलित हो जाता हूँ तो बाकि सब देवों तक मेरी पहुँच, मेरी पकड़ आसन हो जाती है। यहाँ अग्नि को कहा, **अग्ने, यं यज्ञम्**, इसका मतलब हुआ कि कुछ यज्ञ ऐसे भी तो हो सकते हैं, जिसमें तुम सम्मिलित नहीं हो, क्योंकि जो यज्ञ तुम्हें लक्ष्य करके किया होगा, वही तो तुम्हारा होगा। इस दुनिया में सभी भोजन करते हैं, लेकिन किसी के भी सामने रखी हुई थाली मेरी तो नहीं है। जो मुझे ही दिया गया, मुझे ही प्राप्त हुआ, मैं उसका ही अधिकारी हूँ। जिस यज्ञ को मैंने तुम्हें मान करके किया, तुम्हें पुकार करके किया, तुमको आधार बनाकर के किया, इसलिए कहा **यं यज्ञम्।** मेरे सारे कार्य सदा श्रेष्ठ नहीं होते, सारे कार्य प्राप्त भी नहीं होते सबको,

लेकिन जब तुम्हें मैं अपने कार्य में सम्मिलित कर लेता हूँ तो वह कार्य सबका कार्य हो जाता है, उससे कोई अछूता नहीं रहता।

अग्ने यं यज्ञमध्वरम् हमारे यज्ञ करने मात्र से कोई लाभ होता है, ऐसा नहीं है, **यज्ञ जो** इसका अर्थ है कि यह दोषयुक्त भी हो सकता है, क्योंकि यहाँ दोषरहित करने के लिये कहा है। यदि दोषयुक्त यज्ञ हुआ तो फल नहीं देगा, उद्देश्य तक नहीं पहुँचेगा, उद्देश्य को प्राप्त भी नहीं करायेगा। उस यज्ञ को दोषरहित करने के लिये एक शब्द यहाँ काम में लिया है, **अध्वरम्**। इसकी यज्ञ के प्रसंग में चर्चा हुई है। संस्कृत साहित्य में **'ध्वर'** शब्द का अर्थ होता है **'हिंसा'**। **ध्वरति हिंसा कर्म**, तो **अध्वर** हुआ जिसमें हिंसा न हो। अब इसमें अर्थ निकला कि हिंसा की यज्ञ में सम्भावना है और उस सम्भावना को समाप्त करने के लिये यहाँ **'अध्वर'** कहा है।

मध्यकाल के पण्डितों ने वेद के साथ जो अन्याय किया, वेद पर जो अत्याचार किया, संसार का जो अनुपकार किया, संसार पर जो अन्याय किया उसकी कोई सीमा नहीं है, क्योंकि वो सब यज्ञ के नाम पर किया और वह यज्ञ कभी भी परमेश्वर तक पहुँचनेवाला नहीं हो सकता, क्योंकि वो **अध्वर** नहीं था। उस यज्ञ के करनेवाले को आप **अध्वर्यु** कह रहे हैं, लेकिन उसमें **ध्वर** निरन्तर हो रहा है तो वह **अध्वर्यु** कैसे हो जायेगा? वेद कहता है- यज्ञ तो अध्वर ही होना चाहिये। **ध्वरति हिंसा कर्म**, हिंसा करने को ध्वर कहते हैं। अब **ध्वर** कैसे है- हम जब किसी को पीड़ा देते हैं, किसी की हत्या करते हैं तो वह हिंसा है। हमारे पण्डितों ने एक नियम बना डाला कि यज्ञ के सम्बन्ध में की गयी जो हिंसा है, वह हिंसा नहीं होती। वेद में तो कहीं नहीं लिखा, आप कह रहे हो, क्योंकि हिंसा का विधान वेद में नहीं है, आपने किया है।

आपने किया है इसलिये आप अपने अपराध के पाप से बचने के उपाय बता रहे हो। आप अपने आपसे पाप को कैसे दूर रख सकते हो, उसके लिए आपने नियम बनाया है। वेद में तो कहीं भी नहीं लिखा कि वेद को, वेद में मान कर की गयी हिंसा, हिंसा नहीं होती। हिंसा तो हिंसा है, हिंसा तो होती है। हिंसा केवल हत्या से ही नहीं होती, हिंसा नियम के उल्लंघन से भी होती है। किसी से कटु भाषण करने से भी होती है। कोई काम समय पर न करने से भी होती है, देवताओं का अपमान करने से भी होती है, मनुष्य का अपमान करने से भी होती है, प्राणियों की उपेक्षा करने से भी होती है। वेद तो कहता है यहाँ तो किसी भी तरह की हिंसा वर्जित है, तो प्राणी-हिंसा कैसे हो सकती है? प्राणी-हिंसा के पीछे जो तर्क दिए हैं, वे भी बहुत गन्दे हैं और गलत हैं, क्योंकि यज्ञ से सुगन्ध फैलनी चाहिये, लेकिन मांस से दुर्गन्ध फैलती है, आप उसको यज्ञ कैसे कह सकते हैं? जिस हिंसा के करने से पाप लगता है, आप यज्ञ करके उसका उपयोग करते हैं तो वह पुण्य कैसे हो सकता है? इस पर व्यंग्य करते हुए चार्वाक ने बड़ी सुन्दर कुछ पंक्तियाँ लिखी हैं। वो कहता है

पशुश्चेन्निहितः स्वर्गं ज्योतिष्टोमे गमिष्यति।
स्वपिता यजमानेन तत्र कस्मान्न हिंस्यते।।

यह ब्राह्मण कहता है कि ज्योतिष्टोम यज्ञ में यदि पशु की बलि दी जाए तो पशु स्वर्ग में जाता है। अच्छा, एक बात पूछने की है, जो स्वर्ग जानता है वही तो जाएगा, जो स्वर्ग चाहता है वही जायेगा। क्या पशु जानता है कि स्वर्ग क्या होता है? क्या पशु जानता है कि मुझे स्वर्ग जाना चाहिये? क्या उसके मन में कभी स्वर्ग जाने की इच्छा होती है? तो जो जिसका विषय नहीं, जिसका क्षेत्र नहीं, जिसकी इच्छा नहीं, आप उसे क्यों भेजना चाहते हो? स्वर्ग आपकी कल्पना है, स्वर्ग आपकी कामना है, स्वर्ग आपकी इच्छा है। आप पशु को स्वर्ग क्यों भेज रहे हैं, पशु ने तो कोई प्रार्थनापत्र स्वर्ग का दिया नहीं। आप हवन कर रहे हैं स्वर्ग जाने के लिये, आप उपासना कर रहे हैं स्वर्ग जाने के लिये, आप तप कर रहे हैं, स्वर्ग जाने के लिये, आप प्रवचन कर रहे हैं स्वर्ग जाने के लिये, तो स्वर्ग का सम्बन्ध पशु से नहीं है, आप से है। स्वर्ग किसको जाना है, आपको जाना है, फिर आप वह काम करो जिससे स्वर्ग जाया जाए। चार्वाक ने कहा कितना अच्छा है कि यदि यज्ञ में आहुति देने से पशु स्वर्ग में जाता है और उस स्वर्ग की कामना मनुष्य को है, तो पशु को स्वर्ग भेजने की आवश्यकता

नहीं है, उस मनुष्य को भेजो जो स्वर्ग जाना चाहता है और इसके लिये उसने एक बहुत अच्छा तर्क दिया है- यदि मारा गया पशु इस ज्योतिष्टोम साधारण यज्ञ में डाला जाकर स्वर्ग को जाता है, तो सबसे अच्छी बात यह है कि जो घर में उसका पिता बैठा है, स्वर्ग की कामना लेकर, तो बड़ा सहज है कि आप उसकी बलि दे दो। आपका यज्ञ भी सफल हो जाएगा और आपका पिता स्वर्ग में भी चला जायेगा और घर के कष्ट भी मिट जायेंगे। व्यय भी नहीं होगा, भोजन भी बचेगा।

अतार्किक बातें यज्ञ के साथ जोड़ी गयीं, जिनके कारण से यज्ञ दूषित हुआ, भ्रष्ट हुआ।

अग्ने यं यज्ञमध्वरम्

यज्ञ में किसी भी प्रकार की हिंसा वर्जित है। हिंसा कायिक हो, वाचिक हो, मानसिक हो, कोई भी हिंसा उसमें स्वीकार्य नहीं है। यदि कोई व्यक्ति हिंसा करता है तो वह गलत है, इसीलिये यहाँ पर '**अ**' कहने की जरुरत पड़ी। अर्थात् उस कर्म को आप अच्छे और बुरे दोनों रूप में कर सकते हो और वह बुरे रूप में न किया जाए, इसीलिये निषेध होता है। इस मन्त्र में हिंसा का निषेध है। उसे अपनी ओर से विधान में बदलना यह अर्थ का अनर्थ है, यह वेद-मन्त्रों के साथ अन्याय है, पाप है।

हे अग्ने! ऐसा यज्ञ चाहिये जो देवताओं तक जाता है, जो परिणाम को देनेवाला होता है। जो यज्ञ कैसा हो, **अध्वरं यज्ञम्**। जिस यज्ञ में कोई हिंसा न की गई हो, हिंसा का विचार भी न हो। ऐसे यज्ञ को तू कैसे करता है-

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि

ऐसा यज्ञ हे अग्ने! तेरे लिये बहुत अच्छा लगनेवाली चीज है, तू इस यज्ञ को सब ओर से अपना लेता है, सब ओर से तू अपना बना लेता है और जब तू उसे अपना बना लेता है तो उस यज्ञ को देवताओं तक, उद्देश्य तक, प्रयोजन तक जाने से कौन रोक सकता है? इसलिये यहाँ पर **जो** एक विशेष शब्द दिया है **अध्वरं** के साथ-साथ। जो अध्वरम् होगा, जिसमें नियम का उल्लंघन नहीं होगा, विधि का उल्लंघन नहीं होगा, हिंसा नहीं होगी, ऐसा यज्ञ हम जब करेंगे तो उस यज्ञ को **विश्वतः** समस्त रूप में, उसके हर रूप में परमेश्वर की उपस्थिति देखी जा सकेगी, इतना ही नहीं जहाँ तक उसका प्रभाव है, सब ओर से '**परिभू**' तू होने वाला होगा और जब ऐसा यज्ञ जो **अध्वर** होगा, जिसमें हिंसा नहीं होगी, जिसमें तू सम्मिलित होगा, तुझे सामने रखकर किया गया होगा, तब निश्चित रूप से उस यज्ञ में तू सब ओर, सब तरफ होगा, सब रूपों में होगा, तब हम मन्त्र पढ़ेंगे-

अग्ने यं यज्ञमध्वरं विश्वतः परिभूरसि।
स इद्देवेषु गच्छति।।

आचार्य डॉ. धर्मवीर व्याख्यानमाला - ५

दिनांक ०६ अक्टूबर २०२१

विषय - 'भारत राष्ट्र और धर्म को चुनौतियाँ : आर्यसमाज के सन्दर्भ में'

स्थान - ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर

वक्ता - डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा

सम्पर्क - ०१४५-२४६०१६४

कुछ तड़प-कुछ झड़प

अतीत का रक्तरोदन!

प्रा. राजेन्द्र 'जिज्ञासु'

जब ज्वलन्त जी और मैं झूम उठे- वही संगठन व संस्थायें फूलती-फलती हैं जो अपने लगनशील सेवकों को प्रोत्साहन देती हैं और अपनी उपलब्धियों तथा विफलताओं का लेखा-जोखा करते हुए उपलब्धियों का प्रचार तथा विफलताओं से कुछ सीखती हैं। आर्यसमाज में पहले ये दोनों ही गुण थे। अब सोच तथा व्यवहार बदल गया है। इसी विषय के कुछ प्रसंग देकर आज समाज-हित में सबको प्रेरणा देने का विचार मन में आया।

यह घटना बहुत पुरानी है। तब श्री ज्वलन्त जी काशी में विद्यार्थी थे और ऋषि-मिशन की सेवा में सक्रिय होकर धूम मचा रखी थी। मुझे आर्यसमाज के उत्सव पर काशी में बुलाया गया। एक दिन ज्वलन्त जी के साथ सम्पूर्णानन्द विश्वविद्यालय के पाण्डुलिपियों के भण्डार देखने का विचार बना तो श्री स्वामी सत्यप्रकाश जी भी हमारे साथ उसे देखने के लिये चल पड़े। पाण्डुलिपियों के विभाग-अध्यक्ष बहुत अनुभवी सुयोग्य पौराणिक ब्राह्मण थे। वह काशी के ही थे। ज्वलन्त जी को विद्यार्थियों में से अत्यन्त योग्य मानकर बहुत स्नेह करते थे।

हम स्वामी जी को साथ लेकर उस विभाग की ओर पैदल चल रहे थे। स्वामी जी धीरे-धीरे चलते थे। जब विभाग-अध्यक्ष अपने कार्यालय में सामने खड़े दिखे तो मैं इन दोनों को छोड़कर तीव्र गति से अकेला ही उनकी ओर चल पड़ा। मैंने उनके पास पहले पहुँचकर कहा, ''यह संन्यासी जी हमारे साथ आये हैं, यह पूज्य पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय के विश्वप्रसिद्ध विद्वान् सुपुत्र डॉ. श्री सत्यप्रकाश संन्यास लेकर पूरे विश्व में धर्म-प्रचार कर रहे हैं। मेरा ऐसा कहने का प्रयोजन यह था कि वह स्वामी जी के मिलने पर उनका यथोचित सम्मान करें।''

वह उपाध्याय जी के नाम नामी से परिचित थे ही। मेरे कथन से वह जान गए कि यह जन्म से ब्राह्मण नहीं हैं। उस भले पुरुष ने जितनी हम दोनों के मिलने पर प्रसन्नता प्रकट की उतनी ही स्वामी जी के लिये की। उस जन्माभिमानी ने महाराज के चरण-स्पर्श तो क्या, उन्हें झुककर भी प्रणाम न किया।

इससे मुझे बड़ा धक्का लगा। अब वह हमें अपना भण्डार दिखाने लगा। थोड़ी ही देर में स्वामी जी ने उसे कहा, आपके पास जो पुरानी से पुरानी पाण्डुलिपि है वह दिखायें। उसने एक पाण्डुलिपि बड़े गर्व से दिखाते हुए उसका काल भी बताया। यह सुनकर स्वामी जी ने जर्मनी आदि देशों के पुस्तकालयों में देखी हुई उससे भी कहीं पुरानी-पुरानी पाण्डुलिपियों के काल की जानकारी देकर उसे चौंका दिया। स्वामी जी के अथाह ज्ञान का उस पर अद्भुत प्रभाव देखकर ज्वलन्त जी और मैं झूम उठे। स्वामी जी ने अपनी विद्वत्ता और व्यक्तित्व की उस पर जो छाप छोड़ी उससे आर्यसमाज की शान को भी चार चाँद लग गये। मैं आर्यसमाज की कीर्ति के लिये इसे तब से सुनाता चला आ रहा हूँ। आर्यसमाज के यश के लिये हमें इससे कुछ सीखना चाहिये।

मैंने अपने विद्वानों के सम्मान के लिये एक प्रयास किया-

कोई दस बारह वर्ष पुरानी घटना है। मैं श्री लक्ष्मण जी 'जिज्ञासु' व एक अन्य बन्धु को साथ लेकर अपने एक विख्यात परिचित सज्जन के पास इस उद्देश्य से गया कि उनकी संस्था द्वारा प्रकाशित और पूरे विश्व में प्रचारित Who's Who ग्रन्थों में श्री पं. सत्यानन्द जी वेदवागीश, डॉ. धर्मवीर जी, डॉ. ज्वलन्त जी, डॉ. सुरेन्द्र जी, डॉ. वेदपाल जी, श्री ब्रह्ममुनि आदि का परिचय भी दिया करें। वह सज्जन मुझे विशेष आदर मान देते हैं। न जाने ऐसे कितने ग्रन्थों में मेरा जीवन-परिचय तथा चित्र भी छापा है।

उस दिन वह कार्यालय में नहीं थे। चलभाष पर उन्हें अपने आने की सूचना दी। वह मेरे सुझाव को बहुत मान देते थे, परन्तु उसके पश्चात् मेरी भागदौड़ कम होती गई

और फिर कभी उनसे मेरा मिलन न हो सका। यदि मैं ऐसा कर पाता तो इससे आर्यसमाज का बड़ा यश बढ़ता। पत्रव्यवहार से ऐसी बातों का ठीक निर्णय नहीं हो पाता। मैंने आर्यसमाज की संस्थाओं के कुछ लोगों को जोड़-तोड़ करके, धन के बल पर अपना परिचय ऐसे ग्रन्थों में छपवाते देखा है।

एक अन्य ऐसी प्रकाशक संस्था से भी मैंने ऐसी बात की। वह मान भी गये, परन्तु उस संस्था का संचालक अकस्मात् चल बसा। इसके साथ यही बताना कुछ आवश्यक समझता हूँ कि उपरोक्त पहले प्रकाशक ने ही पहले यह खोज करके मुझे बताया था कि विश्व में सर्वाधिक जीवनियों का लेखक होने का मेरा कीर्तिमान है। वह औरों को भी मेरा परिचय देते हुए यह बात कहा करते थे। विश्व के किसी अन्य देश (यथा मलेशिया) के एक ऐसे ग्रन्थ में मेरा परिचय देखकर के आपने तत्काल उसकी एक प्रति क्रय कर ली।

आर्यसमाजियों की सोच-

मैंने अनुभव किया कि अब आर्यसमाजियों की पुरानी सोच मर गई है। मैं तीन मूर्ति भवन नई दिल्ली श्री धर्मेन्द्र जी 'जिज्ञासु' के लिये कुछ सामग्री लेने गया तो उन्होंने कहा, ''आप सदस्य शुल्क देकर अथवा आज की फीस देकर हमारे पुस्तकालय का लाभ ले सकते हैं।'' मैंने एक दिन की फीस जेब से निकाली और पूछने पर अपना परिचय दिया तो उन्होंने कहा कि आप तो साहित्य अकादमी के सम्मानित साहित्यकारों में से हैं। आपसे फ़ीस नहीं ली जावेगी।

अब सुनिये! सन् १९५६ में A.B.I. अमेरिकन संस्था ने मेरा परिचय मँगवाकर छपवाया व सुरक्षित किया, फिर अपनी पत्रिका का मुझे Consulting Editor भी चुना। श्री डॉ. ब्रह्ममुनि जी ने कहा इससे सामाजिक कार्यों को दिया जानेवाला समय बँटेगा तो मैंने उसमें रुचि लेनी छोड़ दी। विधर्मियों ने, विदेशियों ने, विरोधियों ने मेरी खोज का, चिन्तन का और साहित्य-सेवा का लाभ लिया और ले रहे हैं। आर्यसमाज में जो महानुभाव मेरी प्रत्येक नई पुस्तक की मुझसे माँग करते रहे और उनसे लाभ लेते रहे, परन्तु मेरे नाम लेने और मेरी पुस्तकों का उल्लेख करने से डरते व बचते रहे, यह उनकी हीनभावना का प्रमाण है और कुछ नहीं।

इससे क्या मैं छोटा हो गया? मेरा कुछ बिगड़ गया? महाशय कृष्ण जी, पूज्य स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, महात्मा आनन्द स्वामीजी, पं. शान्तिप्रकाश जी, श्रद्धेय पं. नरेन्द्र जी की लोरियाँ ले-लेकर मैं जहाँ पहुँचा, मुझे छोटा बनाने में शक्ति नष्ट करने में लगे वे तथाकथित आर्यसमाजी कभी सपनों में भी वहाँ नहीं पहुँच सकते।

मैंने कभी किसी को अपनी पुस्तक की भूमिका लिखने का कष्ट नहीं दिया। किसी की भूमिका लिखने की भूख नहीं जगी। डॉ. कुशलदेव जी, डॉ. ज्वलन्त जी की पुस्तकों के सहर्ष प्राक्कथन लिखे। पूज्य उपाध्याय जी, स्वामी सर्वानन्द जी, स्वामी सत्यप्रकाश जी, डॉ. धर्मवीर जी से अपनी पुस्तकों पर प्राक्कथन अवश्य लिये। जिन्हें दूसरों के ग्रन्थों पर लम्बे-लम्बे लेख लिखने की सनक रही उनको कभी अपनी पुस्तकों पर दो शब्द लिखने को न कहा।

सात खण्डों वाले इतिहास में श्री भारतीय जी ने लाला लाजपतराय की आत्मकथा का उल्लेख करते हुए दूसरे भाग में लम्बे-लम्बे उद्धरण दिये हैं। उसी पुस्तक में लौहपुरुष स्वामी स्वतन्त्रानन्द ग्रन्थ से पर्याप्त सामग्री लेकर मेरा तो क्या मेरे ग्रन्थ का भी नाम तक नहीं दिया।

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी से चिढ़ का कारण क्या?-

मुझे एक-दो बार स्वामी सर्वानन्द जी महाराज ने और एक बार श्री सदानन्द ने उन्हीं का नाम लेकर बताया कि आर्यसमाज में कुछ अहंकारी वक्ता, लेखक न जाने स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी से क्यों चिढ़ते हैं? सात खण्डों के इतिहास में तथा और कई मनगढ़न्त इतिहास विषयक ग्रन्थों में महाशय राजपाल जी के बलिदान तथा स्वामी स्वतन्त्रानन्द की अलग-अलग चर्चा में एक ऐसे लेखक ने ख़ुदाबख़्श हत्यारे द्वारा छुरे से घायल होने की चर्चा तो की है, परन्तु स्वामी जी महाराज द्वारा उसे तत्काल कसकर पकड़कर पुलिस को सौंपने का कभी उल्लेख नहीं किया। ऐसे लोगों को स्वामी जी से चिढ़ है अथवा आर्यसमाज का गौरव अच्छा नहीं लगता?

पाकिस्तान की पत्रिका में छपा-

मित्रो! स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के इस सेवक ने एक पाकिस्तानी दैनिक में छपे एक लेख में और हत्यारे इल्मुद्दीन की जीवनी (पाकिस्तान में छपी) में पढ़ा कि हत्यारा ख़ुदाबख़्श पहलवान तो था ही, उसका एक नाम लोगों ने 'इक्को जिहा' भी रखा था। इस पंजाबी नाम का अर्थ है 'अद्वितीय बलशाली'। मैंने यह प्रमाण पूरे अते-पते के साथ महाशय राजपाल जी की जीवनी में भी दिया।

प्रश्न है कि अद्वितीय बलशाली कौन हुआ? घातक अथवा बाल ब्रह्मचारी स्वामी स्वतन्त्रानन्द। हमें गौरव है कि हमारे सत्गुरु स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी ने ऐसे क्रूर बलशाली घातक को भागने का अवसर ही न दिया।

संसार में सर्वाधिक जीवनियाँ पं. लेखराम की परम्परा के इस सेवक ने लिखीं, यह लिखते हुये भी जिन्हें डर लगता है, उन्हें कौन आर्यसमाजी मानेगा? ऐसे लोग माँग-माँग कर सम्मान और पुरस्कार पाते रहे। आर्यजनता का भरपूर प्यार और सत्कार मुझे बिन माँगे मिला।

विधर्मियों के, विरोधियों के साहित्य पर वैदिक धर्म व ऋषि दयानन्द की छाप लगानेवालों में पं. लेखराम जी के इस नाम-लेवा का भी नाम संसार लेता है और लेगा। इन लोगों को मेरा नाम व काम चुभता है तो इसमें मेरा क्या दोष? विदेशी मुसलमान विद्वान् श्री शहरयार के पत्र अजय जी और मेरे पास आकर कोई भी पढ़ ले।

राधास्वामियों के तथा ज्ञानी दित्तसिंह के ऋषि-जीवन पर वार-प्रहार का उत्तर सप्रमाण मैंने ही दिया।

जो मन में आया सो लिख डाला-

सात खण्डों के तथाकथित इतिहास में हरियाणा पर छपी सामग्री पर कोई बन्धु एक विहंगम दृष्टि डालते हुए रेवाड़ी, महेन्द्रगढ़ के दो-तीन व्यक्तियों को बिठाकर बोल-बोल कर पढ़कर सुनावे। ऐसे दो-तीन व्यक्तियों में श्री अनिल आर्य, श्री परमानन्द वसु भी यदि लिये जावें तो अच्छा रहेगा। इसमें हरियाणा का मुँहज़बानी लिखा इतिहास तो सारा ही ऐसा है, परन्तु दक्षिण हरियाणा की सारी सामग्री पढ़कर रोना आता है। पं. बस्तीराम से लेकर डॉ. सुरेन्द्र कुमार जी तक हरियाणा के सब प्रमुख और प्रबुद्ध आर्य जानते हैं कि राव युधिष्ठिर सिंह दिल्ली दरबार के समय ऋषि दर्शन करके, उन्हें सुनकर ऋषिभक्त आर्य बन गये थे और वहाँ ही ऋषि को रेवाड़ी आने का निमन्त्रण दे दिया। इस सात खण्डी इतिहास में राव ऋषि का वध करने उन तक रेवाड़ी में डेरे तक पहुँच गया। इस मनगढ़न्त कहानी का न तो पण्डित बस्तीराम, पं. लेखराम जी को पता लगा और न इस लेखक ने राव युधिष्ठिर सिंह के परिवार में कुमारी सुमित्रा एम.एल.ए. के मुख से सन् १९६० में सुना।

राव युधिष्ठिर सिंह ने एक बच्चा बाद में गोद लिया था। इस इतिहास में छपा है ऋषि ने उनके पुत्र व पौत्र का उपनयन संस्कार करवाया। अच्छा होता लेखक उन दोनों का कुछ नाम भी गढ़कर शोभा पा लेता। पं. बस्तीराम जी का निधन १९५८ ई. में हुआ था। इसमें छपा है कि सन् १९५२ में उनकी मृत्यु हुई।

बेजोड़ शास्त्रार्थ महारथी पं. मनसाराम जी का जन्म हरियाणा का, शिक्षा हरियाणा में पाई और जेलों में हरियाणा से गये। इस सात खण्डी इतिहास में उनका, पं. जगतकुमार शास्त्री, लाला बनवारी लाल, स्वामी सोमानन्द, स्वामी सन्तोषानन्द और महाशय हीरालाल का नाम तक नहीं। कमाल है कि इस अद्भुत रिसर्च पर हरियाणा में किसी ने दो शब्द न कहे। स्वामी सर्वानन्द जी महाराज की घोर निराशा उसी समय मैंने लेखों में व्यक्त कर दी। लौहपुरुष ग्रन्थ का लाभ तो लिया, परन्तु लोहारु हत्याकाण्ड का वृत्तान्त उससे उद्धृत करते हुए क्यों डर गये?

धर्मधुन के धनी डॉ. धर्मवीर जी-

अपने निधन से थोड़ा समय पहले धर्मवीर जी ने मुझे कहा, ''आर्यसमाज में उत्साह भरने के लिये इस वर्ष के लिये कोई कार्यक्रम सुझावें।'' मैंने कहा, ''दक्षिण के अमर बलिदानी वीर वेदप्रकाश के बलिदान से हैदराबाद में आर्यसमाज के इतिहास में बलिदान की अखण्ड परम्परा चल पड़ी। उन बलिदानों का स्मरण करते हुए अमृत महोत्सव (७५वीं बलिदान जयन्ती) मनाया जावे। धर्मवीर जी को यह सुझाव जँच गया। पहले अजमेर में, फिर गुंजोटी महाराष्ट्र में चार-पाँच प्रदेशों के आर्यों ने सोत्साह यह पर्व मनाया।

वहाँ यज्ञ के ब्रह्मा धर्मवीर जी होंगे, यह घोषणा हो चुकी थी। धर्मवीर जी ने जाते ही दृढ़तापूर्वक कहा, ''यहीं

के दो युवा विद्वान् पं. प्रियदत्त जी तथा राजवीर जी वेदपाठ भी करेंगे और ब्रह्मा भी यही होंगे।'' कहा, ''मैं वेदोपदेश दूँगा। इनका पूरा सहयोग करूँगा।''

मैंने धर्मवीर जी की दूरदर्शिता और त्याग-भावना की भूरि-भूरि प्रशंसा की। वहाँ इसका अमिट व गहरा प्रभाव पड़ा। पाँच-छः प्रदेशों के चुने हुए यजमानों की दक्षिणा का परित्याग क्या कोई छोटी बात थी?

महाराष्ट्र में प्रायः खाट पर कम ही सोते हैं। रात्रि को धर्मवीर जी के लिये और मेरे लिये डबल बैड का पलंग बिछाया गया। मुझे लेटने को कहा गया। धर्मवीर जी आप वहीं प्रियदत्त जी के साथ नीचे भूमि पर लेट गये। मुझे पलंग पर सोना अब अच्छा न लगा। अगली रात मैंने भी पलंग पर सोने से इनकार कर दिया। आज आर्यसमाज में ऐसे बहुत से वक्ता कर्मकाण्डी महानुभाव हैं जिनके नाम के साथ कुछ विशेष विशेषण न जोड़े जावें तो वे रूठ जाते हैं।

स्वराज्य-संग्राम में सबसे पहली ऐसी घटना-

आर्यसमाज अपने जन्मकाल से ही नये-नये कीर्तिमान बनाता आया। दुर्भाग्य से Readymade रटेरटाये भाषण व लेख लिखनेवालों ने आर्यसमाज के इतिहास व देन की विलक्षणता ही देश व समाज के सामने नहीं आने दी। गाँधी युग के पहले सत्याग्रह में पंजाब के हिसार नगर (तब हरियाणा पंजाब में था) एक प्रखर बुद्धि के देशसेवक विद्वान् ने सत्याग्रह करके एक विलक्षण इतिहास रचा। उसे दण्डित करने के लिये कारागार में ही केस की सुनवाई होती थी। न्यायपालिका, कार्यपालिका तब पृथक्-पृथक् नहीं थे।

डी.सी. ही सत्याग्रही बन्दियों के केस सुनकर दण्ड देता था। एक आर्यसमाजी सत्याग्रही की बारी आई तो उसने डी.सी. के सामने अपने मुख पर तौलिया डाल लिया। डी.सी. ने उसे डाँट लगाई, धमकाया। यह क्या अशिष्टता? डाँट सुनकर वह वहीं डी.सी. के सामने बैठ गया। यह तो न्यायालय का अपमान था ही। डी.सी. ने रोष से बहुत कुछ कहा और कांग्रेस के वकील बख़्शी रामकिशन को कहा, अपने उद्दण्ड सत्याग्रही को समझा लो अन्यथा मैं न्यायालय के अपमान contempt of court का केस भी बना दूँगा।

काँग्रेस का वकील भी तो प्रसिद्ध आर्यसमाजी था। उसने कहा, ''मेरा client (ग्राहक) सब कानून जानता है।'' अब सत्याग्रही बोला, ''जिसने देश और धर्म को चाँदी के कुछ टुकड़ों के लिये बेच दिया हो, मैं उसका मुख देखना नहीं चाहता।''

आप जानना चाहेंगे वह सत्याग्रही कौन था? वह परम पराक्रमी पं. मनसाराम वैदिक तोप था। डी.सी. ने इस अपराध में उसकी सब सम्पदा न्यायालय के अपमान करने के दोष के कारण ज़ब्त कर ली। **स्वराज्य-संग्राम के इतिहास में इस केस में दण्डित होनेवाला प्रथम अपराधी यही सत्याग्रही था।**

जब डॉ. ओमप्रकाश जी गुप्त हिसार समाज के प्रधान थे तब मैंने अपने व्याख्यान में बड़े जोश से यह घटना सुनाई तो इसे सुनते हुये बख़्शी रामकिशन जी ने डॉ. गुप्त के कान में कहा, ''जिज्ञासु जी की आयु तो छोटी है। यह घटना ऐसे सुना रहे हैं जैसे इनके सामने घटी हो। मैं ही तो उनका वकील था।''

डॉ. ओमप्रकाश जी बोले, ''वह घटना ठीक-ठीक बता रहे हैं या कुछ मिलावट हटावट कर दी है?'' वकील जी बोले, ''सुना तो एकदम ठीक रहे हैं।'' इस पर डॉक्टर जी ने कहा, ''यही तो उनकी खोज तथा बोलने की शैली की विशेषता है।''

मैं हिसार आता-जाता रहता था। मैंने जेल रोड का नाम पं. मनसाराम मार्ग करवाने की समाजवालों को प्रेरणा दी, परन्तु किसी ने कुछ भी न किया। देश के स्वराज्य संग्राम की एक बेजोड़ घटना का मूल्य किसने जाना? श्रीयुत पं. मनसाराम जी अग्रवाल कुल में जन्मे थे। जातिभिमानी लोग एक कट्टर आर्य विद्वान् का स्मारक क्यों बनवायें। इन अग्रवालों ने अग्रोहा में बहुत मूर्तियाँ लगवाई हैं। पण्डित मनसाराम इन्हें याद क्यों आता?

उठो! भागो! आर्य आ जावेंगे-

उदगीर महाराष्ट्र के स्वर्गीय श्री पं. कर्मवीर जी और पं. प्रेमचन्द जी निज़ाम के काल में एक बार लातूर रोड प्रचारार्थ पधारे। लातूर रोड से रेलवे स्टेशन दूर पड़ता है। आर्यसमाज के लोग उन्हें स्टेशन पर पहुँचाकर रात्रि समय

घरों को चले गये। इनकी ट्रेन के आने में देर हो गई। यात्रीगण में से कुछ प्लेटफॉर्म पर लेट गये। हमारे आर्योपदेशक भी वहीं लेट गये। इनके पास कुछ मुसलमान समय बिताने के लिये बातों में लग गये। पं. प्रेमचन्द जी और पं. कर्मवीर जी बड़े ध्यान से कान लगाकर उनकी बातें सुन रहे थे।

एक मुसलमान ने किसी घटना को सुनाते हुये कहा, ''आर्यों ने अमीन साहिब की वहाँ दाँताँ (दक्षिण में दाँतों को दाँताँ ही बोलते हैं) ही तोड़ दीं। हमारा उस्मान अली बादशाह तो अन्धा बना बैठा है। देखो! थानेदार के दाँत तोड़ने की आर्यों की हिम्मत!''

उनकी यह कहानी सुनकर पं. प्रेमचन्द जी ने मनोविनोद से ऊँचे-ऊँचे बोलकर पं. कर्मवीर जी से कहा, ''उठो और भागो। आरयाँ (आर्य लोग) यहाँ आ गये तो हमारी भी मार-कुटाई हो सकती है।''

उनको सान्त्वना देते हुये वे मुसलमान बोले, ''नहीं ऐसा मत सोचें। बस इतना है आरयाँ की (आर्यों की) बैलगाड़ी आ रही हो तो आप उन्हें रास्ता दे दो।'' इतने में ट्रेन आ गई। इन पण्डितों को ट्रेन पर चढ़ते देखकर गाड़ी पर से उतरने व चढ़नेवाले कई आर्यों ने ''पण्डित जी नमस्ते! पण्डित जी नमस्ते'' कहना आरम्भ कर दिया तो नमस्ते, नमस्ते सुनकर वे मुसलमान परस्पर कहने लगे, ''अरे ये तो आरये (आर्य) ही थे। भागो! भागो! का वैसे ही शोर मचा रहे थे।''

यह रोचक प्रसंग मैंने शोलापुर निवासकाल में श्री पं. कर्मवीर जी और श्री प्रेमचन्द्र जी से सुना था। आर्यों की कैसी धाक थी, यह उसका एक उदाहरण है।

कुछ इधर की कुछ उधर की- आर्यसमाज से जुड़ी प्रत्येक घटना व उपयोगी जानकारी की चर्चा करते रहने में ही मिशन का लाभ है। इस भावना से शून्य हमारी कथनी, करनी व लेखन-कार्य का क्या लाभ! **तनिक सोचिये तो**! बठिण्डा निवासी श्री जितेन्द्र कुमार जी गुप्त वकील ने अपनी जेब से ढाई लाख रुपये व्यय करके 'महाकवि सुरूर समग्र' विशालकाय ग्रन्थ छपवाकर एक इतिहास रच दिया है। इस ग्रन्थ का सम्पादन एक देशभक्त मुस्लिम बन्धु ने किया है। आर्यसमाज के डेढ़ सौ वर्ष के इतिहास में एक देशप्रेमी मुसलमान ने पहली बार एक आर्यसामाजिक साहित्य के ग्रन्थ पर शानदार कार्य किया है। **कितने आर्यसमाजियों ने इसकी चर्चा की है?** इस ग्रन्थ की आर्यसमाजेतर साहित्यकारों में धूम है। कमाल तो यह है कि **उस बन्धु ने यह ग्रन्थ इस सेवक को, इस विनीत को समर्पित किया है।** मुझे ग्रन्थ छप जाने के कई मास बाद यह पता चला।

मैं आर्यसमाज की इस उपलब्धि का श्रेय पं. लेखराम जी, पण्डित शान्तिप्रकाश जी की तपस्या को देता हूँ। यह भी बताना आवश्यक है कि श्री जितेन्द्र कुमार, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के शिष्य महाशय गेन्दाराम की चौथी पीढ़ी के निष्काम समाजसेवी लम्बे समय से यह निष्काम सेवा कर रहे हैं। समाज में कितनों को यह ज्ञान है?

आधी-अधूरी बात इतिहास नहीं होती- अपने आपको सर्वज्ञ समझनेवाले एक लेखक ने आर्यसमाज के एक निर्माता, ऋषि दर्शन करनेवाले उनके पक्के व सच्चे शिष्य को 'एक व्यक्ति...' ऐसा लिखा है। मैंने उस आर्यसमाजी नेता व निर्माता विषयक लेखक को भूल सुझाई तो भी उसने अपनी भूल पर न तो खेद ही प्रकट किया और न भूल का सुधार किया। भूल पर क्षमा माँगनेवालों का तो समाज में अब युग ही चला गया।

यह आर्यनेता कौन था? यह थे कई समाजों के संस्थापक व अधिकारी रहे मास्टर मुरलीधर जी। आदिकाल के यह महान् सुधारक, विचारक और मास्टर आत्माराम जी को आर्यसमाज में खींचकर श्री पं. लेखराम जी से भेंट करवाकर इतना महान् बनानेवाले, समाज मन्दिरों में झाड़ू आप लगानेवाले इसी नररत्न ने लाला देवीचन्द जैसा कर्मठ नेता दिया। महात्मा मुंशीराम जी इस पर बलिहारी थे। अब मास्टर आत्माराम जी की चर्चा करनेवाले इन लोगों के बारे में कुछ जानते ही नहीं। न मुरलीधर जी, न पं. लेखराम और न महात्मा मुंशीराम की मास्टर आत्माराम जी के निर्माण में चर्चा।

इतना अहंकार!- बाबू रामविचार ने मेरे द्वारा लिखे गये एक जीवन-चरित्र का 'वैदिक पथ' हिण्डौन में उपहास उड़ाते हुये कभी लिखा था कि यह भी क्या जीवनी है कि चरित्रनायक की मृत्यु का वर्णन जब हो गया तो पुस्तक

वहीं समाप्त न करके यह आगे लिखे जा रहा है? मैंने किसी कारण से इस लेख की उपेक्षा न करके सप्रमाण जो उत्तर दिया तो डॉ. धर्मवीर जी सरीखे पारखी मेरा उत्तर पढ़कर झूम उठे। मैंने लिखा कि तुमने वर्षों मुसलमान बनकर एक पक्के नमाजी के रूप में इस्लामी विचारक सर सैयद अहमद का साहित्य व जीवनी बड़ी भक्ति से पढ़ी, उस जीवनी में मृत्यु के वर्णन के पश्चात् सैंकड़ों और पृष्ठ पढ़े व देखे थे या नहीं? महात्मा हंसराज का नाम रटते-रटते उनकी जीवनी में मृत्यु का अध्याय पढ़कर आगे की सामग्री देखी थी या नहीं? ऋषि के कुछ जीवन पढ़े न सही, देखे तो होंगे। पं. लेखराम जी, हरबिलास जी, लाला लाजपतराय, मेहता राधाकिशन जी के लिखे ऋषि-जीवन भी देखने का अवसर मिला होगा, वहाँ भी यही शैली है। लाला लाजपतराय और मेहता जी के ग्रन्थों में भी प्रेरक लम्बी कवितायें छपी हैं। मेरा उत्तर पढ़कर, न लेखक ने और न प्रकाशक ने क्षमा माँगी।

स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी महाराज कहा करते थे आर्यसमाज तो झूठे के घर तक पीछा करता है। एक ने 'दयानन्द सन्देश' में मेरा उपहास उड़ाकर नन्ही वेश्या को चरित्र की पावनता का प्रमाण-पत्र दे दिया। ऋषि ने अन्त समय नाई को पाँच रुपये दिलवाये, इस घटना को मिथ्या बताया। सारा आर्यसमाज मौन रहा। मैंने उसी लेखक के पोथे से नन्ही का वेश्या होना व नाईवाली घटना दिखा दी। कई और अद्‌भुत प्रमाण दिये, परन्तु अहंकार के कारण क्षमा न माँगी गई। नन्ही का निजी घर तो आज भी जोधपुर वेश्या मुहल्ला में देखा जा सकता है।

कोई डिग्रीधारी लाला लाजपतराय के जन्मस्थान का नया नाम गढ़ ले। लाला जी को बी.ए. एल.एल.बी. लिख दे, महात्मा हंसराज को ऋषि का उपदेश सुनवा दे, उपाध्याय जी को गुरुकुल कांगड़ी में नियुक्त कर दे, स्वामी सत्यप्रकाश जी को आनन्द स्वामी जी से संन्यास दिलवा दे। ये सब गप्पें पचाने की आज आर्यसमाज में शक्ति है। इस पाचनशक्ति पर किसे बधाई दें? आज रिसर्च यह है कि पं. धर्मभिक्षु जी ने एक कायस्थ कन्या से विवाह किया। एक ही ग्रन्थ में एक सहस्र गप्पें परोसने का एक ने कीर्तिमान बना लिया। **अतीत रक्तरोदन क्यों न करे?**

ऋषि मेला २०२१ हेतु स्टॉल आवंटन

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष ऋषि मेला १२, १३, १४ नवम्बर शुक्र, शनि, रविवार २०२१ को ऋषि उद्यान में आयोजित होगा। उसमें आर्य जगत् का साहित्य, हवन सामग्री, अन्यान्य सामग्री की स्टॉल लगती हैं। प्रति स्टॉल किराया १००० रु. निर्धारित है। जिसकी राशि पहले जमा होगी उसी क्रम से स्टॉल का आवंटन होगा। जिन महानुभावों को जितनी स्टॉल की आवश्यकता है, उसी अनुरूप राशि बैंक ड्राफ्ट द्वारा या नकद जमा करावें।

स्टॉल सुविधाः- कारपेट, दो टेबल, दो कुर्सी, २ ट्यूब लाइट प्रति स्टॉल। **स्टॉल साइज**- ७.५×१५ फीट।

ध्यातव्य- **१.** स्टॉल में रखी टेबल, कुर्सी आदि पूर्व निर्धारित सामग्री को इधर-उधर या अन्य स्टॉल में न बदलें। **२.** अतिरिक्त सामग्री की आवश्यकता हो तो टैन्ट हाउस के कर्मचारी से सम्पर्क कर प्राप्त करें तथा निर्धारित राशि तुरन्त भुगतान करें। **३.** बिस्तर, रजाई, चादर, तकिया को टेन्ट हाउस कर्मचारी से प्राप्त कर निर्धारित राशि जमा करा दें। **४.** स्टॉल व्यवस्थापक से स्टॉल संख्या, राशि की रसीद दिखाकर प्राप्त करें। बिना पूर्व अनुमति के स्टॉल में सामान न रखें, न अधिकृत करें। **५.** आपके सक्रिय सहयोग व अनुशासन की अपेक्षा है। अनियमितता को स्थान न देवें। ६. अपना मोबाइल (चलभाष) नवम्बर देना अति आवश्यक है। ७. आप अपना स्थाई पता अवश्य देवें। ८. स्टॉल में आप पुस्तकें/दवाइयाँ/अन्य सामग्री का उल्लेख अवश्य करें। ९. स्टॉल आवंटन हेतु अग्रिम राशि जमा करावें, अन्यथा विचार सम्भव नहीं होगा। १०. एक पासपोर्ट फोटो भिजवावें, जो परिचय पत्र के साथ अंकित हो। उसमें स्टॉल आवंटन संख्या भी अंकित किया जाएगा। ११. स्टॉल आवंटन की सूचना निर्धारित अवधि में दी जायेगी। **नोटः**- किसी प्रकार का अवैदिक साहित्य एवं सामग्री न हो अन्यथा उचित कार्यवाही सम्भव होगी।

सम्पर्क- वासुदेव आर्य-९४६०११२०९२

ऐतिहासिक कलम से....

ज्ञान की ज्योति

पं. गंगाप्रसाद उपाध्याय

अमावस्या की चन्द्रिकारहित अन्धेरी रात के पश्चात् जब सूर्य निकलता है तो प्राणिमात्र नये जीवन से अनुप्राणित हो उठता है। पशु-पक्षी बड़े हर्ष से अपने-अपने कार्य में लग जाते हैं। मनुष्य न केवल प्राकृतिक सौन्दर्य का आनन्द लेता है अपितु अपने जीवन की समस्त क्रियाओं को करने में तत्पर हो जाता है। अन्धकार और प्रकाश में यही भेद है। अन्धकार अकर्मण्यता है और प्रकाश जीवन है।

जैसे सूर्योदय से शरीर-जीवन में प्रेरणा मिली है, इसी प्रकार जब वेदरूपी सूर्य का प्रकाश ऋषियों की आत्मा में पड़ा होगा, उस समय ऋषियों ने जीवन के महान् तत्त्वों की खोज करके मनुष्य जाति को ऊँचा उठाने का प्रयास किया होगा। वैदिक साहित्य इन तत्त्व-रत्नों से भरा पड़ा है।

ऋग्वेद मण्डल १, सूक्त ५० के १३वें मन्त्र में लिखा है-

उदगादयमादित्यो विश्वेन सहसा सह।
द्विषन्तं मह्यं रन्धयन् मो अहं द्विषते रधम्।

देखो! सूर्य निकला विश्वव्यापी प्रेरणा और प्रकाश के साथ। मुझसे द्वेष करनेवाली शक्तियाँ नष्ट हो गईं। वह मेरा नाश न कर सकीं।

सूर्य मित्र है, अन्धकार शत्रु है। ज्ञान मित्र है, अज्ञान शत्रु है। वेद ज्ञान है। उससे मनुष्य का कल्याण होता है। इसलिये वेद पढ़ना चाहिये।

वैदिक प्रेरणाओं में सबसे महत्त्वपूर्ण है सच्चाई के लिये व्रत करना। यजुर्वेद के १ ले अध्याय के ५वें मन्त्र में प्रार्थना की गई है।

अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।
इदमहमनृतात् सत्यमुपैमि।

(यजुर्वेद १.५)

हे ईश्वर! मैं व्रत करता हूँ कि झूठ को छोड़कर सच की खोज करूँगा। प्रभो! मेरी सहायता कीजिये।

संसार में अनेक प्रकार के व्रत पाये जाते हैं। कोई एक दिन उपवास करता है कोई एक मास, कोई इससे भी अधिक। परन्तु, यह व्रत नहीं है। खाना न खाने का नाम व्रत नहीं। व्रत एक मानसिक संकल्प का नाम है। ऐसा संकल्प कि असत्य का त्याग करने और सत्य को ग्रहण करने के लिये सर्वथा उद्यत रहे। वेद की यही आज्ञा है और 'आर्यसमाज' के ४ थे नियम में इसी व्रत को दुहराया गया है। इस एक व्रत के प्रयास में अन्य सब छोटे-बड़े अच्छे काम आ जाते हैं। '**नहि सत्यात् परोधर्मः**' अर्थात् साँच से बढ़कर कोई पुण्य नहीं और यह बात ठीक है तो झूठ से बढ़कर कर कोई बुरी चीज नहीं। इसलिये वेद मन्त्र का मुख्यतम उपदेश यह है कि सत्य को खोजो, सत्य को बोलो और सत्यनिष्ठ होकर जीवन व्यतीत करो।

वैदिक साहित्य में उपदेश है कि मनुष्य चार चीजों को ग्रहण करे और चार को छोड़ दे। ग्रहण करने की चार चीजें हैं- धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष और छोड़ने की चार चीजें हैं- काम, क्रोध, लोभ और मोह। पहले चार गुण मनुष्य के मित्र हैं और पिछले चार अवगुण मनुष्य के शत्रु हैं।

धर्म क्या है? वेद कहता है-

भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देव भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाँसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः।।

(यजु. २५.२१)

हे यज्ञरूपी पुण्यकर्मों की रक्षा करनेवाले विद्वानो! हम कानों से भद्र सुनें। आँखों से भद्र देखें। सुदृढ़ अंगों के द्वारा शरीर को पुष्ट करते हुए हम लोग दिव्यगुण सम्पन्न आयु का उपभोग करें।

संसार भद्र भी है और अभद्र भी। यों तो जगत् की सभी चीजें भद्र हैं, क्योंकि वो हमारे हित के लिये दी गई हैं। आँख हमारे भले के लिये हैं, क्योंकि इनसे देखते हैं। सूर्य आँख की सहायता के लिये है। सूर्य न हो तो आँख देख नहीं सकती। अन्धापन अभद्र है। समाखापन भद्र है। आँखें न हों तो गुलाब के फूल का सौन्दर्य हमको आनन्दित

नहीं कर सकता। इसी प्रकार सब चीजों पर विचार कीजिये। लेकिन, जब मनुष्य अज्ञानवश पशु बन जाता है तो सारा जगत् उसके लिए अभद्र हो जाता है। वेद इसीलिये पढ़ा जाता है कि वेद के ज्ञान से हम पशु न बनें, देव बनें। पशुओं की नीच प्रवृत्तियों से अपने को रोकना और देव बनने की कोशिश करना ही धर्म है। धर्मात्मा वह नहीं है जो 'धर्म' 'धर्म' चिल्लाता है। जैसे कि भारत की गलियों में सूर्य ग्रहण पड़ने पर मेहतर चिल्लाया करते हैं- 'धर्म करो' 'धर्म करो'! न सूर्य को आपत्ति से बचाने के लिये गंगा में डुबकी लगाना धर्म है। पग-पग पर मनुष्य में पशुओं की सी प्रवृत्तियाँ बढ़ने का डर रहता है। इन प्रवृत्तियों को सजग होकर रोकना ही धर्म है। शरीर के अंगों को गाँजा पीकर या निरर्थक उपवास रखकर सुखा देना धर्म नहीं है। प्रभु ने शरीर के अंग सुखा डालने के लिए नहीं बनाये, सुदृढ़ करने के लिये बनाये हैं। कान हों या आँखें, हाथ हों या पैर सभी बलवान् होने चाहिएं और जब अंग सुदृढ़ हो जायें तो इनसे ऐसे काम करना कि हम 'देव' बन जायें, यही धर्म है। यही भद्र है। यदि अज्ञान या आलस्य के वशीभूत होकर हम दैवी शक्तियों का विकास नहीं कर सकते तो यही अभद्र है। यही अधर्म है।

धर्म के पश्चात् दूसरा नम्बर 'अर्थ' है। उस सब सामग्री को जुटाना जिससे धर्म में प्रवृत्ति हो और अधर्म से बचें इसी को 'अर्थ' कहते हैं। वेद में अर्थ का नाम 'रयि' है। साधारण भाषा में इसी को 'धन' या 'दौलत' कहते हैं। सच्चा धन या असली 'दौलत' क्या है! वेद कहता है-

अग्निना रयिमश्नवत् पोषमेव दिवे दिवे।
यशसं वीरवत्तमम्।

(ऋग्वेद १/१/३)

धन को ईश्वर की सहायता से कमाओ। यह 'अर्थ' की पहली शर्त है। चोर और डाकुओं की सहायता से भी धन कमाया जा सकता है। जुआ खेलकर भी धन कमा सकते हैं, परन्तु यह 'अर्थ' नहीं 'अनर्थ' है। भोजन नहीं, विष है। विष भी खाया जाता है और भोजन भी खाया जाता है, परन्तु विष के खाने से हम धर्म करने में समर्थ नहीं होते। इसलिये 'विष' भोजन नहीं। जो 'धन' बुरे काम करके कमाया जाता है वह 'धन' नहीं है । धन शब्द 'धा' धातु से बना है, जिससे हमारा वास्तविक हित न हो वह 'धन' नहीं, अधन या कुधन है। अंग्रेजी में इसको 'वेल्थ' (Wealth) कहते हैं । 'वेल्थ' शब्द 'वील' (Weal) से बना है। 'वील' का अर्थ है 'भद्र'। जिससे मनुष्य के 'वील' अर्थात् 'भद्र' में उन्नति नहीं होती वह 'वील' या 'वैल्थ' नहीं है। रुपया, पैसा, मकान, जायदाद, राज, ये सब 'अर्थ' भी हैं और 'अनर्थ' भी। यदि उनसे धर्म या वील (Weal) बनता है तब यह अर्थ या वैल्थ है, अन्यथा अनर्थ और अभिशाप (Curse) है। ऋग्वेद के ऊपरी मन्त्र में अर्थ के तीन लक्षण दिये हैं-

(१) दिवे दिवे पोषम्- दिन-प्रतिदिन जिससे हमारी पुष्टि हो। जिस भोजन से शरीर कमजोर हो जाये वह भोजन नहीं। जिस धन से मनुष्य अपने को निर्बल और भयभीत समझने लगे वह धन या अर्थ नहीं।

(२) यशसं- अर्थात् यश की वृद्धि करनेवाला हो। धनाढ्य जुआरी, धनाढ्य कंजूस, धनाढ्य जालिम, धनाढ्य घमण्डी, धनाढ्य लोलुप या विषयी, ये सब यश के भागी नहीं होते। जो रुपया मालिक में पाशवी (जंगली) प्रवृत्तियों को उत्पन्न करता है और दूसरों को बिगाड़ता है वह 'रयि' या 'अर्थ' नहीं है, क्योंकि यह यश का दाता नहीं है। 'सम्पत्ति' का नाम है 'यशोदा' अर्थात् यश को देने वाली। जैसे फूल में सुगन्धि होती है उसी प्रकार सम्पत्तिशाली पुरुष में यश होता है, सुगन्धि फूल को फूल बनाती है और सैकड़ों नाकों में जाकर उनको आनन्दित करती है। यश मनुष्य को स्वयं को आनन्द देता है और दूसरों को आनन्दित करता है। जो धन दूसरों को कष्ट दे वह 'धन' नहीं अनर्थ है। इसलिये त्याज्य है।

(३) वीरवत्तमम्- अर्थात् धन वीरता का साधन हो। जिस धन से मनुष्य निर्बल हो जाये वह तात्त्विक रूप से धन नहीं। प्रायः देखा गया है कि धनवान् मनुष्य निर्धन की अपेक्षा शारीरिक बल में, मानसिक उत्साह में और आध्यात्मिक प्रेरणाओं में निर्बल होता है। निर्धन जातियाँ धनवाली जातियों को कमजोर देखकर उन पर आक्रमण करती हैं और उनको जीत लेती हैं। यह यथार्थ में धन नहीं था। जिस धन में उपर्युक्त तीन गुण नहीं वह वेद की भाषा में अर्थ नहीं।

धर्म और अर्थ के पश्चात् तीसरा नम्बर 'काम' का है। मनुष्य का मन कामनाओं का पुतला है। अनेक प्रकार की अच्छी और बुरी इच्छायें मन में उठा करती हैं। कुछ तो धर्म और अर्थ के अनुकूल होती हैं, कुछ प्रतिकूल। कुछ इच्छाओं की प्रेरणा मनुष्य को धर्मात्मा और यशस्वी बनाती है और कुछ को पापी और अधम। जो 'काम' अर्थात् इच्छायें धर्म और अर्थ की अनुगामिनी होती हैं वे मनुष्य के कल्याण का साधन होती हैं। यजुर्वेद में लिखा है-

यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवैति।
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु।।

(यजुर्वेद ३४.१)

कि हमारा मन जो जागते में तथा स्वप्न में अनेक प्रकार की शुभ और अशुभ कामनाओं की पूर्ति के लिये दूर-दूर भटकता रहता है, यह मन 'शिवसंकल्प' अर्थात् ऐसी कामनाओंवाला हो जो धर्म और अर्थ का अनुसरण करके चौथे पदार्थ अर्थात् मोक्ष को देनेवाली हो सकें। वेद मन्त्र में 'मन' को '**ज्योतिषां ज्योतिः**' अर्थात् प्रकाशों का प्रकाश कहा है। मन अन्धेरा है तो संसार अन्धेरा है। मन में रोशनी है तो संसार रोशन है, क्योंकि 'मन' ही तीसरे बड़े पदार्थ अर्थात् काम का साधक है। मनुष्य की कामनाओं को देखकर ही आप जान सकते हैं कि वह सभ्यता की सीढ़ी के किस डण्डे पर है और वह ऊपर जा रहा है या नीचे गिर रहा है। इसी के आगे एक मन्त्र में कहा है-

यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते
तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु। (यजु. ३४.३)

अर्थात् बिना मन के तो कोई काम किया ही नहीं जा सकता। जब मन हर काम करने के लिये इतना आवश्यक है तो मन को सबसे अधिक शुद्ध, पवित्र होना चाहिये। मैला शरीर, मैली इन्द्रियाँ हानिकारक हैं, परन्तु मैला मन सबसे अधिक हानिकारक है। इसी मन की सहायता से डाकू डाका डालता, चोर चोरी करता, व्यभिचारी व्यभिचार करता, शराबी शराब पीता और कसाई पशुओं को मारता है। इसी मन से विद्यार्थी विद्या पढ़ता, याज्ञिक यज्ञ करता, दानी दान देता, परोपकारी परोपकार करता, ईश्वरभक्त ईश्वर की उपासना करता है। चोर की धन की इच्छा भी एक कामना है। योगी की ईश्वर-प्राप्ति की इच्छा भी एक कामना है, परन्तु कामना कामना में भेद है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष के पुण्य-चतुष्टय में 'काम' एक पवित्र वस्तु है। वह धर्म और अर्थ की अनुगामिनी है और मोक्ष तक पहुँचानेवाली है।

इस पुण्य-चतुष्टय का चौथा चरण है 'मोक्ष' अर्थात् छुटकारा। छुटकारा किससे? मनुष्य के हाथ में है ही क्या जिसको वह छोड़ सके। मैं इसी संसार का एक अंग हूँ जैसे कि अन्य सब हैं। हम संसार को छोड़कर कहाँ जा सकते हैं? लोग दुनिया से तंग होकर दुनिया से भागते हैं। दुनिया परछाईं की तरह उनके साथ दौड़ती है। महात्मा बुद्ध ने 'धम्मपद' में कहा है कि गाड़ी का बैल जब दौड़ता है तो समझता है कि यदि मैं तेज दौड़ूँगा तो गाड़ी के बोझ से छुटकारा मिल जायेगा, परन्तु जितनी तेजी से वह दौड़ता है उतनी ही तेजी से गाड़ी उसके पीछे दौड़ती है, क्योंकि बैल का गाड़ी से बन्धन तो वैसा ही विद्यमान है, वह तो टूटा नहीं। जब तक बन्धन नहीं टूटता, बैल का पीछा भी नहीं छूटता। वेद कहता है-

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम्।
उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।।

(ऋग्वेद ७/५९/१२)

अर्थ- हम तीनों लोकों के पिता परमात्मा की उपासना करते हैं, जो सुगन्ध आदि सभी प्रकार के आनन्दों का दाता और हमारी आध्यात्मिक शक्ति को बढ़ानेवाला है। परमेश्वर की इस उपासना से मैं मृत्यु से इस प्रकार छूट जाऊँ जैसे पका हुआ फल डण्ठल से अलग हो जाता है। कच्चे फल को तोड़ने में फल से भी रस बहने लगता है और डण्ठल से भी। अधिक कच्चे फल को तोड़ने में कठिनाई भी बहुत होती है। पका फल स्वयं ही गिर पड़ता है और उसके गिरने से न वृक्ष को हानि पहुँचती है न फल को। फल का फलत्व इसी में है कि फल पक जाये और उससे अधिक से अधिक उपकार हो सके।

इस मन्त्र में 'अम्बक' का अर्थ है 'पिता'। जैसे 'अम्बा' का अर्थ है माता! 'त्र्यम्बक' का अर्थ हुआ तीनों लोकों का पिता अथवा मनुष्य की अधम, मध्यम और उत्तम अवस्थाओं में उसका पालन और कल्याण करनेवाला। परमेश्वर की उपासना हर दशा में मनुष्य की रक्षा करती

है। ईश्वर का उपासक पके फल के समान है। फल का जन्म वृक्ष पर होता है। उसका पालन भी वृक्ष पर ही होता है। वृक्ष से फल अपना रूप, अपना रस, अपना सब कुछ लेता है और शनैः शनैः पूर्णतया विकसित हो जाता है। पके फल को वृक्ष की फिर आवश्यकता नहीं रहती। उसे वृक्ष से जो कुछ लेना था वह ले चुका। अब कुछ लेने को शेष नहीं है। अतएव वह स्वयं ही गिर पड़ता है और वृक्ष को आँसू बहाने की आवश्यकता नहीं होती। मनुष्य भी इसी संसार-रूपी वृक्ष का एक फल है, इसी में उत्पन्न होता है, इसी में फैलता है, इसी में इसका विकास होता है। कच्चे फल को न तो वृक्ष छोड़ना चाहता है, न फल वृक्ष को छोड़ना चाहता है। अविकसित और कच्चा मनुष्य न तो संसार को छोड़ना चाहता है और न संसार उसको छोड़ना चाहता है। घर गृहस्थी के झँझटों से तंग आकर लोग घर को छोड़कर वनवासी बन जाते हैं। वह समझते हैं कि संसार को उन्होंने त्याग दिया, परन्तु यह उनका भ्रममात्र है। न उन्होंने संसार को छोड़ा, न संसार ने उन्हें छोड़ा। जब वह घर से निकलकर जंगल को भागा तो जंगल में भी घर उनका पीछा करता हुआ आ पहुँचा। वह बाना बदल सकते थे। श्वेताम्बर से काषायाम्बर हो सकते थे, जटायें बढ़ा सकते थे, परन्तु मन तो कच्चे फल के समान संसार से बँधा हुआ था, अतः उनको छुटकारा न मिल सका। वेद मन्त्र कहता है- **बन्धनात् मृत्योः मुक्षीय**- ''हे प्रभो! मैं मृत्यु के बन्धन से छूट जाऊँ।'' **मा अमृतात्**। अमृत से मैं न छूटूँ। जो अमृत से छूटा है वह मुक्त नहीं है, क्योंकि वह मौत के बन्धन में है। मौत उसके सिर पर मण्डराती है। वह मौत से भयभीत है। वन में जाकर उसने क्या छोड़ा? शरीर की भावनायें वही रहीं? मौत का डर वैसा ही रहा, तृष्णा वैसी की वैसी ही रही। विषयों की तरंगें मन को गन्दा करती रहीं। संन्यासियों ने समझा कि हम भगवे कपड़े पहनकर घर के बन्धनों से छूट जायेंगे। बन्धनों ने कहा कि हम गाड़ी के बैल के समान तुमको जकड़े हुए हैं। देखें तुम कहाँ जाते हो। पके फल के समान वही मनुष्य 'मोक्ष' की प्राप्ति कर सकता है जिसने धर्म, अर्थ और काम तीनों सिद्धि की हों। इसकी सिद्धि संसाररूपी वृक्ष के ऊपर ही हो सकती है, उससे अलग होकर नहीं। अलग होना तो न हितकर है न सम्भव। जो मनुष्य धर्म के नियमों का पालन करता है उसको स्वयं ही संसार की दुष्ट और अनिष्ट भावनाओं से उपरति हो जाती है। वह बुरी बातों तथा बुरे गुणों से घृणा करने लगता है। जो 'अर्थ' के तत्त्व को समझता है वह अनर्थ से बचा रहता है। उसमें वे दुष्ट गुण नहीं आने पाते जो अनर्थ से अर्थ के उपार्जन करनेवालों में आते हैं। उसकी कामनायें शुभ होती हैं। उसका मन **शिवसंकल्प** होता है। उसको मृत्यु का भय नहीं रहता। वेद मन्त्र में कहा गया है कि मैं मृत्यु से छूटूँ, अमृत से न छूटूँ। संसारी मनुष्य अमृत से मुक्त है अतः मृत्यु से बद्ध है। जो अवगुणों में फँसा है वह गुणों से दूर है। जो गुणों से युक्त है वह अवगुणों से दूर है।

हमने आरम्भ में कहा था कि चार चीजें ग्रहण करने की हैं और चार चीजें छोड़ने की। हमने संकेत रूप से यहाँ वो वेद मन्त्र दिये जिनमें इन 'चार पदार्थों' की श्रेष्ठता का वर्णन है। चार छोड़ने की चीजें हैं काम, क्रोध, लोभ, मोह। इस प्रसंग में 'काम' का वही अर्थ नहीं है जो चतुष्क में था। मन में उठनेवाली बुरी वासनाओं का नाम 'काम' है। मनुष्य नर होगा या नारी। नर के मन में नारी के प्रति और नारी के मन में नर के प्रति जो अनुचित राग है उसी को 'काम' कहते हैं। नर और नारी का सम्बन्ध एक प्रकार से बड़ा पवित्र सम्बन्ध है। जैसे किसान भूमि में बीज डालता है कि वृक्ष पर फल लग सके, इसी प्रकार नर और नारी का सतोगुणी सम्बन्ध मनुष्य की उत्पत्ति का साधन बनता है, परन्तु यही भावना जब दूषित हो जाती है तो नर-नारी के समुचित सम्बन्ध के स्थान में कुत्सित व्यवहार को जन्म देती है और इससे घर के घर तबाह हो जाते हैं। कामवासना मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है। व्यभिचारी मनुष्य अपने लिये भी अभिशाप है और संसार के लिये भी। जिस व्यक्ति के साथ उसका सम्बन्ध होता है वह नष्ट हो जाता है। उससे मनुष्यों की उत्पत्ति नहीं होती अपितु नरक होता है।

सन्तानोत्पत्ति के प्रसंग में वेद में कहा है-

दस मासाञ्छशयानः कुमारो अधिमातरि।
निरैतु जीवो अक्षतो जीवो जीवन्त्या अधि।।

(ऋग्वेद ५/७८/९)

माता के उदर में बच्चा १० मास रहकर और माता के जीवन से अक्षत अर्थात् पूर्ण जीवन ग्रहण करके बाहर आता है। जीवित माता से जीवित पुत्र उत्पन्न होता है। पूर्णतया विकसित माता ही विकसित पुत्र को जन्म दे सकती है। इसलिये माता के लिये 'जीवन्त्या' विशेषण दिया है। कामी पिता या कामातुरा माता से धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष को प्राप्त करनेवाली सन्तान नहीं उत्पन्न हो सकती। अत: 'काम' को पाप-चतुष्टय में सबसे पहले गिनाया है। लौकिक भाषा में बदचलन उसी पुरुष या स्त्री को कहते हैं जिसमें 'काम' की अनुचित प्रवृत्ति हो, क्योंकि कामी पुरुष अन्धा है।

कामान्धो नैव पश्यति।

कामी पुरुष न अपना भला देख सकता है न पराया। अत: त्याज्य अवगुणों में 'काम' का नम्बर पहला है।

मनुष्य का दूसरा शत्रु 'क्रोध' है। क्रोध मस्तिष्क का एक विकार है। घोड़ा बिगड़ जाने पर सवार की जो दशा होती है वही दशा क्रोधी मनुष्य की हो जाती है। उसका खून उबलता है, बुद्धि मारी जाती है, आँखों के सामने अन्धेरा छा जाता है, ऐसी दशा में मनुष्य सभी अनर्थ कर सकता है। मातायें बच्चों को मार डालती हैं। बच्चे माँ-बाप को मार डालते हैं। शत्रुओं के ऊपर अत्याचार तो एक साधारण सी बात है।

तीसरा शत्रु 'लोभ' है। धन के लिये अनुचित और असीमित प्रेम को 'लोभ' कहते हैं। लोभी मनुष्य धन चाहता है, परन्तु धन का उचित उपयोग नहीं कर सकता। धन के लोभ में स्त्रियाँ सतीत्व छोड़ देती हैं। लोग अपने माँ-बाप की हत्या कर देते हैं। चोरी, डाका, जुआ, रिश्वत, मकर, फरेब ये सब लोभ के कारण होते हैं।

चौथा शत्रु है 'मोह'। किसी वस्तु के लिये अनुचित प्रेम होना मोह है। संस्कृत में 'मुह' धातु का अर्थ है मूर्च्छा या बेहोशी होना। मोह भी बुद्धि को विकृत कर देता है।

धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष रूपी पुण्य-चतुष्टय में और काम-क्रोध-लोभ-मोह रूपी पाप-चतुष्टय में परस्पर ऐसा ही वैर है जैसा कि (प्रकाश और अन्धकार में) में। ये एक-दूसरे के विरोधी हैं और एक-दूसरे का नाश करने में तत्पर रहते हैं। यजुर्वेद के ४० वें अध्याय के १ ले मन्त्र में उपदेश दिया है कि-

मा गृध: कस्यस्विद् धनम्।

लालच मत करो। धन किसका है? अर्थात् किसी एक का धन है ही नहीं। जो लालच करके धन कमाता है उसके पास भी धन नहीं रहता। बड़े-बड़े धनवालों को भी अन्त में धन छोड़ना पड़ता है। जो धन को नहीं छोड़ना चाहते उनको धन छोड़कर भाग जाता है। इसलिये वेद में कहा है-

तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा:।

(यजु. ४०.१)

(त्यक्तेन सता तेन जगता)। जगत् की चीजों का इस प्रकार उपभोग करो मानो तुम उनको छोड़ रहे हो और उनसे चिमटना नहीं चाहते। मुसाफिर जिस सड़क पर चलता है उससे चिमटता नहीं। उसे छोड़ता है। सड़क के एक भाग को छोड़कर आगे बढ़ जाना ही यात्रा है। जो एक स्थान पर ही रहना चाहता है, वह यात्री नहीं। धर्म का जीवन एक यात्रा है। बढ़ने का नाम यात्रा है और 'मोक्ष' उसका अन्तिम ध्येय है।

चार पदारथ छाँड़ि के चार पदारथ लेउ।
मर्त्यलोक में देव बन जन्म सफल कर लेउ।

वेद पढ़ो, वेद को समझो और वेद के अनुकूल आचरण करो। तुम्हारा भला होगा।

परोपकारिणी सभा के आगामी कार्यक्रम

शीतकालीन योग-साधना शिविर	-	**०३ से १० अक्टूबर २०२१**
डॉ. धर्मवीर स्मृति व्याख्यानमाला	-	**०६ अक्टूबर २०२१**
ऋषि मेला	-	**१२, १३, १४ नवम्बर २०२१**

सांसारिक सुख का मार्ग भटकाने वाला मार्ग है।

कन्हैयालाल आर्य

यम ने नचिकेता को बताया, ''संसार में दो मार्ग हैं और दोनों के फल भिन्न-भिन्न हैं। मनुष्य अपनी बुद्धि के अनुसार इन दोनों मार्गों में से किसी एक को चुनता है।'' इसका स्पष्ट संकेत करते हुए कठोपनिषद् का ऋषि कहता है-

श्रेयश्च प्रेयश्च मनुष्यमेतस्तौ सम्परीत्य विविनक्ति धीरः।
श्रेयो हि धीरोऽभि प्रेयसो वृणीते, प्रेयो मन्दो
योगक्षेमाद्वृणीते।।

(कठोपनिषद् द्वितीय वल्ली श्लोक द्वितीय)

(श्रेयः) कल्याणकारी (च) और (प्रेयः) प्रिय [अच्छा] लगनेवाला (मनुष्यम्) मनुष्य को (एतः) प्राप्त होते हैं, सामने आते हैं (धीरः) ज्ञानी, बुद्धिमान् पुरुष (तौ) उन दोनों को (सम्प्रीत्य) भली प्रकार मन से प्राप्त कर (विविनक्ति) विवेक करता है, छानबीन करता है (धीरः) ज्ञानी समझदार पुरुष (हि) निश्चय से ही (प्रेयसः) प्रिय लगने वाली वस्तु को (प्रवृत्ति मार्ग को) (श्रेयः) कल्याणकारी मार्ग को [निवृत्ति मार्ग को] (अभिवृणीते) स्वीकार करता है (मन्दः) मूर्ख व्यक्ति (योगक्षेमात्) सांसारिक सुखों के प्राप्त करने और उनको रक्षित करने के विचार से (प्रेयः) प्रिय लगने वाली वस्तु को [प्रवृत्ति मार्ग को] (वृणीते) ग्रहण करता है।

'श्रेय' तथा 'प्रेय'-ये दोनों भावनायें मनुष्य के सामने आती हैं। धीर-पुरुष इन दोनों की परीक्षा करता है, छानबीन करता है। वह कोई भी कार्य शीघ्रता में बिना विचारे नहीं करता, तत्काल फल नहीं देखता। वह 'प्रेय' की अपेक्षा 'श्रेय' का ही वरण करता है, परन्तु मन्दबुद्धि (मूर्ख) व्यक्ति सांसारिक सुखों को प्राप्त करने के विचार से 'प्रेय' का वरण करता है।

ये दोनों मार्ग एक-दूसरे के विपरीत हैं, विरुद्धार्थसूचक और दूर हैं और विद्या और अविद्या नाम से जाने जाते हैं। 'श्रेय' और 'प्रेय' निवृत्ति और प्रवृत्ति मार्ग ही को विद्या और अविद्या भी कहा जाता है। जो लोग नचिकेता की भाँति सांसारिक भोगों में लिप्त नहीं होते वे ही श्रेय (विद्या) पथगामी होते हैं, परन्तु प्रेय (अविद्या) ही को जिन लोगों ने अपना ध्येय बना रखा है और जो प्रायः स्पष्टतौर से परलोक (श्रेय) पथ की सत्ता को नहीं मानते, उन्हें बार-बार मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है। वे संसार में भी मनोरथ सफल नहीं बन पाते। संसार के लोग अविद्या में फँसे हुए, सांसारिक भोगों में पड़े हुए, अपने को धीर और पण्डित माने फिरते हैं। टेढ़े मार्गों से इधर-उधर भटकते हुए ये मूर्ख व्यक्ति ऐसे जा रहे हैं जैसे एक अन्धा अन्य अन्धों को मार्ग दिखा रहा हो।

प्रवृत्ति (प्रेय) और निवृत्ति (श्रेय) अर्थात् लोक और परलोकोन्नति, ये दो मार्ग हैं जिनसे मनुष्य को गुजरना पड़ता है। इनमें से प्रेय का इस प्रकार उपयोग करना चाहिये जिससे वह श्रेय का साधन बन जाये। इसलिये कहा गया है कि उद्देश्य को श्रेय बनाना चाहिये, परन्तु जो लोग विषय-भोग की दृष्टि से केवल लोकोन्नति को अपना लक्ष्य बना लेते हैं और श्रेय की चिन्ता नहीं करते वे दुःखों की अत्यन्त निवृत्तिरूप वास्तविक लक्ष्य से गिर जाते हैं।

धीर पुरुष, श्रेय को और मन्द, अज्ञानी सांसारिक सुख की दृष्टि से केवल प्रेय को अपना ध्येय बनाते हैं।

प्रेय मार्ग- प्रेयमार्ग सांसारिक भोगवाद का मार्ग है। इस मार्ग पर चलनेवालों को सांसारिक भोग-पदार्थ अधिक प्रिय और कल्याणकारी प्रतीत होते हैं। इस प्रकार प्रेय मार्ग में चलने वाले व्यक्ति सांसारिक विषय भोगों में फँसकर जन्म-मरण के चक्र में पड़े रहते हैं। कहने, सुनने और देखने में प्रेय मार्ग सुन्दर, लुभावना और आकर्षक प्रतीत होता है क्योंकि इस मार्ग पर चलना बड़ा सहज और प्रिय प्रतीत होता है। ऊपर से प्रिय लगनेवाला यह मार्ग मृत्यु की ओर ले जाता है। प्रेय मार्ग वाला व्यक्ति चकाचौंध में खोकर इस संसार में मृत्यु और दुःख को भोगता है। भोगवादी प्रवृत्ति के लोग भोग-वासना, सुख-सुविधा जैसे भी प्राप्त हो, प्राप्त करने में लगे रहते हैं। वे इन सुविधाओं को प्राप्त करने के लिये किसी को पीड़ित करने में भी नहीं हिचकिचाते। इसके लिये वे किसी भी स्तर पर पतित होने

के लिये तत्पर रहते हैं। ये लोग अपने सुख-स्वार्थ को ही महत्त्व देते हैं।

प्रेय मार्गवाली विचारधारा प्राचीन समय से ही चली आ रही है। रावण भी इसी संस्कृति का पोषक था। चार्वाक का भी यही दर्शन था-

यावत् जीवेत् सुखं जीवेत्। ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्।

जब तक जीओ, सुख से जीओ, ऋण लेकर भी सुख मिले तो ऋण लेकर उस का आनन्द भोगो। यदि उसके लिये कितनी ही ठगी या चतुरता करनी पड़े, बस सांसारिक सुख भोगो। अधिकांश लोगों को यह विचार अच्छा लगता है और वो इस शैली से आनन्द मनाने में लगे रहते हैं। उनका मानना है कि जब तक संसार में मूर्ख हैं, निर्बल हैं तो चतुर और बलवान तो राज करेंगे ही। अतः वे अपनी चतुरता, ठगी, जालसाजी से लोगों को येन-केन-प्रकारेण ठगते रहते हैं। ऐसे लोग भोगवादी प्रवृत्ति के होते हैं, वे परिश्रम करके नहीं बल्कि ठगने में ही सुख का अनुभव करते हैं, वे स्वयं अपनी संचय की प्रवृत्ति को आगे बढ़ाते रहते हैं चाहे उसके लिए उनको कितना ही पतित क्यों न होना पड़े। वास्तविकता यह है कि आज प्रत्येक व्यक्ति के मस्तिष्क में एक बात बैठ गई है कि किसी भी विधि से अर्जित करो, धन अर्जित करो, क्योंकि वे मानते हैं कि जिसके पास धन है, उसी का सम्मान होता है, उसी के सभी मित्र बनते हैं, सगे सम्बन्धी उसके चारों ओर चक्कर काटते हैं। धन आना चाहिये चाहे कुछ भी करो। यह आधुनिक विचार है।

प्रत्येक व्यक्ति को यह ज्ञात है कि वह संसार में जितना भी संग्रह करता है, वह उसके साथ नहीं जाता है। मृत्यु के समय सांसारिक वस्तुओं का संग्रह यहीं रह जाता है, चाहे वह धन हो, भवन हों, कुछ भी हो। हम गम्भीरता से विचार करें तो मानव कर्म करने में स्वतन्त्र है, परन्तु फल भोगने में परतन्त्र है। आप अच्छा करें या बुरा, परन्तु फल भोगने में हमारे हाथ बँध जाते हैं। मनुष्य का स्वभाव है कि वह अपने आपको सबसे अधिक बुद्धिमान् समझता है, वह अपने को सही और दूसरों को गलत समझता है और वास्तविकता को समझने का प्रयास नहीं करता। मनुष्य जब धनी हो जाता है तो उसमें मद जागता है, अहंकार जागता है। व्यक्ति को कुल का, धन का, विद्या का, न जाने कितने-कितने प्रकार के मद जाग जाते हैं, जो उसे उचित मार्ग पर नहीं जाने देते। भगवान् श्रीकृष्ण जी ने दुर्योधन को कहा, ''जिस मार्ग पर तुम चल रहे हो, वह ठीक नहीं है। जिस मार्ग को तुमने पकड़ा है, उस मार्ग पर चलकर आगे जाकर प्रायश्चित्त करना पड़ेगा। तुम तो गुरु द्रोण जैसे श्रेष्ठ गुरु के शिष्य हो। तुमने तो उनसे धर्म का ज्ञान प्राप्त किया है। इसलिए सोचो कि तुम क्या कर रहे हो?'' दुर्योधन के मुख से तत्काल ये शब्द निकले- ''**जानामि धर्मं न च मे प्रवृत्तिः**'' हे कृष्ण! मैं धर्म को जानता हूँ, अच्छा क्या है, बुरा क्या है, यह भी मैं जानता हूँ, परन्तु क्या करूँ कि धर्म में प्रवृत्ति नहीं है।'' आगे कहा, ''**जानामि अधर्मं न च मे निवृत्तिः**'' जिसे तुम अधर्म कहते हो, उसे भी मैं जानता हूँ, परन्तु वहाँ से दूर हटने का मेरा मन नहीं करता। मैं जो कहता हूँ ठीक कहता हूँ-

केनापि देवेन हृदिस्थितेन।
यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि।।

मेरे अन्दर के जो संस्कार हैं, वो बार-बार कहते हैं कि मैं ठीक हूँ। आप लोगों के समझाने से यहाँ कुछ भी होनेवाला नहीं है।

यम ने कहा, ''हे नचिकेता! संसार में दो मार्ग हैं एक मार्ग मेरी ओर अर्थात् मृत्यु की ओर जाता है और दूसरा मार्ग परमात्मा की ओर। पहला मार्ग भयंकर मार्ग है, परन्तु दिखने में सुन्दर होने के कारण लुभावना लगता है। यदि मानव इस प्रेय मार्ग की ओर जायेगा तो जन्म-मरण के बन्धन से नहीं छूट पायेगा। इसलिए आचार्य यम ने नचिकेता से चकाचौंध के मार्ग की ओर दौड़नेवालों की दुर्दशा का कारण स्पष्ट करते हुए कहा-

न साम्परायः प्रतिभाति बालं प्रमाद्यन्तं वित्तमोहेन मूढम्।
अयं लोको नास्ति पर इति मानी पुनः पुनर्वशमापद्यते मे।।

कठोपनिषद् द्वितीय वल्ली श्लोक ६

(वित्तमोहेन) धन, सम्पत्ति, पद के मोह से (मूढम्) मूढ़ (प्रमाद्यन्तम्) प्रमादपूर्ण (बालम्) विवेकरहित पुरुष को (साम्परायः) परलोक की बात (न) (प्रतिभाति) पसन्द नहीं आती (अयम् लोकः) यह ही लोक है (परः, नास्ति) परलोक कुछ नहीं (इति मानी) ऐसा मानने वाला (पुनः

पुनः) बार-बार से (मे) मेरे, मृत्यु के (वशम् आपद्यते) वश में आता है। हे नचिकेता! संसार में कुछ बालबुद्धि के लोग हैं। वे अपने आपको ज्ञानी मानते हैं। मूलरूप से ऐसे बालबुद्धि लोगों को परलोक कभी समझ नहीं आता, क्योंकि यथार्थ रूप से उन्हें दिखाई ही नहीं देता। तत्त्व-जिज्ञासा के प्रति वे प्रमादी हो जाते हैं। वे जानने का प्रयास ही नहीं करते कि संसार में कुछ और भी है। ऐसे विवेकरहित पुरुष धन, पद, बल में ऐसे पागल हो जाते हैं कि उन्हें कुछ भी समझ नहीं आता। वो अपने अहंकार में मदान्ध होकर पुनः पुनः मृत्यु के द्वार पर आते हैं।

प्रेय मार्ग पर जानेवाले व्यक्ति सदा ही असत्य, हिंसा, कामुकता, तन्द्रा, आलस्य, प्रमाद, छल-कपट, मार-काट, लूट, कृपणता, अविद्या, अज्ञान, निराशा, अविवेक, निन्दा, क्रूरता आदि दोषों से आपूरित होकर सदा ही अशान्त रहते हैं। इनके जीवन का कोई आध्यात्मिक लक्ष्य नहीं होता। शरीर से परे आत्मा-परमात्मा की बातें ये सोच ही नहीं सकते। विषय भोग ही इनका सर्वस्व होता है अर्थात् सदैव इनकी स्थिति **पुनरपि जननम् पुनरपि मरणम्** वाली ही रहती है। अतः यह मार्ग त्याज्य है।

श्रेय मार्ग- यह मार्ग बाहर से देखने में लुभावना नहीं लगता, परन्तु इसका परिणाम बहुत सुखद होता है। अधिकांश व्यक्तियों से मार्ग का चुनाव करते समय यही त्रुटि हो जाती है। श्रेय मार्ग वाला व्यक्ति अमृत प्राप्त करता है। यह मार्ग त्यागवादी प्रवृत्ति वाले लोगों का है, जो सोचते हैं कि अल्प वस्तु में अपना जीवन यापन कर लेंगे, परन्तु किसी की वस्तु का अपहरण नहीं करेंगे, अपने उपभोग के लिये किसी के बच्चे के अश्रुओं को लेकर नहीं आयेंगे। किसी का पाप अपनी झोली में नहीं भरेंगे। अपनी छत और अपनी दीवारें किसी के पाप से नहीं सजायेंगे। अपना जीवन कुछ कम सुख-सुविधाओं में व्यतीत कर लेंगे परन्तु अनर्थ से अर्जित की गई आजीविका नहीं करेंगे। इस त्यागवृत्ति के लोग बहुत न्यून होते हैं, परन्तु श्रेय मार्ग के वास्तविक पथिक यही होते हैं। यह मार्ग परमात्मा की ओर चलने का मार्ग है। चाहे यह मार्ग ऊबड़=खाबड़, रूखा-सूखा प्रतीत होता है, परन्तु मानव जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष-प्राप्ति के मार्ग की ओर ले जाता है।

इस मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति परोपकार में लगे रहते हैं। सत्संग, सेवा, सहयोग, वेदादि शास्त्रों का अध्ययन इनके जीवन का उद्देश्य होता है। ये लोग तप के मार्ग को अपनाते हुए आनन्द का अनुभव करते हैं। ये लोग अनासक्ति और जितेन्द्रियता को महत्त्व देते हैं। ऊपर से कठिन दिखनेवाला यह मार्ग उन्हें आनन्द की अनुभूति कराता है। ये लोग सांसारिक प्रपंचों में लिप्त नहीं होते। ये लोग खाने के लिये नहीं अपितु जीने के लिये खाते हैं। ये लोग **तेन त्यक्तेन भुञ्जीथाः** [त्यागपूर्वक भोग] में विश्वास रखते हैं। उनकी दृष्टि में सांसारिक भोग विनाश की ओर ले जाता है। यह मार्ग समस्याओं को उलझाने के स्थान पर सुलझाने का कार्य करता है। प्राचीन ऋषि-मुनि यथा महात्मा बुद्ध, महात्मा महावीर, महात्मा भर्तृहरि, आचार्य याज्ञवल्क्य, राजा जनक इस प्रकार के मार्ग के अनुगामी थे। आधुनिक काल के सन्तों में स्वामी दयानन्द सरस्वती, स्वामी श्रद्धानन्द सरस्वती सरीखे महापुरुषों ने इस मार्ग को चुना। इन महापुरुषों ने लौकिक सुखों को तुच्छ व नश्वर समझकर उन्हें ठोकर मार दी और आध्यात्मिक मार्ग को अपनाना अपने जीवन का ध्येय माना।

मानव की बुद्धिहीनता है कि वह चकाचौंध के मार्ग में दौड़कर अपना जीवन व्यर्थ कर रहा है। जब उसका विवेक जाग्रत होता है तब व्यक्ति को ज्ञात होता है कि वह उचित मार्ग पर नहीं था। जो उसे प्राप्त करना था, उसे प्राप्त न करके त्रुटिपूर्ण मार्ग पर अनचाही वस्तु प्राप्त कर बैठा। जो उसे प्राप्त करना था उस ओर वह चला ही नहीं। तभी विवेक जाग्रत होता है वह कल्याण के, पुण्य के, परोपकार के मार्ग पर चलने लगता है, उसी का जीवन सुखी होता है, यही श्रेय मार्ग है।

यह मनुष्य शरीर पुण्य कर्मों से प्राप्त होता है। बुद्धिमान् जन इसे प्राप्त कर श्रेयस्-प्राप्ति का प्रयत्न करते हैं। श्रेय मार्ग का पथिक निश्चित कल्याण को प्राप्त होता है। प्रत्येक मनुष्य के सम्मुख पग-पग पर श्रेय और प्रेय मार्गों में से चुनाव के अवसर आते हैं। विवेकी पुरुष उन दोनों में से श्रेय को ग्रहण कर लेता है और प्रेय को त्याग देता है। श्रेय पथ में जाने वाले व्यक्ति के सत्य, अहिंसा, तप, ब्रह्मचर्य, दान, यश, ऐश्वर्य, शम, दम, चित्त की प्रसन्नता, कर्म-

कौशल, अनिन्दा, हर्ष, प्रेम, कर्त्तव्यनिष्ठा, राष्ट्रभक्ति, वीरता आदि गुण साथ-साथ रहते हैं। वे अपनी मनोभूमि में हिंसा, झूठ, छल, कपट, चोरी, व्यभिचार आदि पापकर्मों का बीज ही अंकुरित नहीं होने देते। वे खरपतवार के समान उन्हें मूलसहित मनोभूमि से उखाड़ फेंकते हैं।

बाधाएँ- श्रेय मार्ग परमात्मा की ओर चलने का मार्ग है, शाश्वत सुख-आनन्द प्राप्ति का मार्ग है। इस मार्ग पर चलने की प्रेरणा हमारे ऋषि मुनियों ने वेदादि शास्त्रों से हमें प्रदान की है, परन्तु इस मार्ग पर चलना कठिन है। इस मार्ग पर अनेक बाधाएँ, विघ्न और विपरीत परिस्थितियाँ आती हैं। जो व्यक्ति इस मार्ग पर चलना चाहता है तो उसे इस मार्ग पर आनेवाली बाधाओं का ज्ञान आवश्यक है।

श्रेय मार्ग के पथिक के लिये सबसे प्रमुख बाधा 'अज्ञान' है। अज्ञानरूपी अन्धकार का परित्याग आवश्यक है। अज्ञान को क्लेशों का मूल बताते हुए योगदर्शन में पाँच क्लेशों का उल्लेख है।

अविद्याऽस्मिता रागद्वेषाभिनिवेशाः पञ्च क्लेशाः।

अविद्या या मिथ्या ज्ञान, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश ये पाँच क्लेश हैं। अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश इन चार क्लेशों की जननी अविद्या बताई है। अविद्या के होने पर ये क्लेश अस्तित्व में आते हैं, उसके न होने पर नहीं। अनित्य पदार्थों को नित्य मानना, अशुद्ध पदार्थों को शुद्ध मानना, दुःख को सुख समझना, जो पदार्थ आत्मा नहीं है उसको आत्मा समझना ही अविद्या या मिथ्या ज्ञान है।

अस्मिता- अंहकार, बुद्धि और आत्मा को एक मान लेना अविद्या है। इसके परिणामस्वरूप अहंकार का उदय होता है। अहंकार सब शोभा और लक्ष्मी का नाश कर देता है। आत्मोन्नति में अहंकार सबसे बड़ी बाधा है। श्रेय मार्ग के पथिक के लिये इसको दूर करना आवश्यक है। जैसे-जैसे अविद्या न्यून होती जाती है वैसे-वैसे अस्मिता, क्लेश भी निर्बल होता जाता है।

राग- सुखानुशायी रागः (योगदर्शन २/७) जब मनुष्य एक बार सुख भोग लेता है तो बार-बार उस सुख को पुनः भोगना चाहता है। इसी का नाम राग है।

द्वेष- दुःखानुशायी द्वेषः (योगदर्शन २/८) दुःख भोगने के पश्चात् दुःख और दुःख के साधनों के प्रति अन्तःकरण में रहनेवाली जो विनाश की इच्छा, क्रोध, आक्रोश है, वह द्वेष नामक क्लेश कहलाता है। इसे ईष्या या घृणा भी कहते हैं। ईर्ष्या से ग्रस्त व्यक्ति अपने दुःखों की अपेक्षा दूसरों के सुखों से अधिक दुःखी होता है।

जहाँ राग-द्वेष होते हैं वहीं पर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि होते हैं। राग और द्वेष दोनों का मूल क्रोध है। ऐसे महाविनाशक शत्रु पर विजय पाना अत्यन्त आवश्यक है। त्याग, सन्तोष, सहनशीलता तथा धैर्य आदि सद्भावनाओं के माध्यम से व्यक्ति क्रोध जैसे महाविनाशकारी शत्रु पर विजय प्राप्त कर सकता है।

अज्ञान के कारण जीवात्मा परमात्मा से दूर होता जाता है। अतः मनुष्य परमात्मा सम्बन्धी अध्यात्म विद्या प्राप्त करके ही अज्ञान से मुक्त हो सकता है।

अभिनिवेश- शरीर से प्रीति और मृत्यु से भय अभिनिवेश क्लेश कहलाता है। प्रत्येक व्यक्ति की यह अभिलाषा होती है कि वह सदा चिरजीवी रहे। इसके लिये वह प्रत्येक प्रकार का कर्म करता है।

योगदर्शन में परमात्मा की प्राप्ति के लिये अर्थात् श्रेय मार्ग का यात्री बनने के लिये इन क्लेशों का क्षय अनिवार्य है।

श्रेय मार्ग में अगली मुख्य बाधा ऐषणायें है। ये तीन हैं-

(i) पुत्रैषणा- पुत्र (सन्तान) की प्राप्ति की कामना। यह कामना मानव की मानसिक व्यापक शक्ति है। इसका संकुचित तथा सीमित रूप 'कामवासना' है। जिसके पीछे संसार भागता रहता है, परन्तु वह कभी तृप्त नहीं हो सकती। यह एक प्रज्वलित अग्नि के समान है जिसको जितना भोगा जाता है, उसकी ज्वाला उतनी ही तीव्र हो जाती है। वर्तमान में अनेक अमर्यादायें बढ़ रही हैं, इसका मुख्य कारण कामवासना की तीव्रता है।

(ii) वित्तैषणा- अधिक से अधिक धन-सम्पत्ति का स्वामी होने की कामना करते रहना ही वित्तैषणा है। वितैषणा आज के युग में प्रथम स्थान ले चुकी है। व्यक्ति का एक ही उद्देश्य रह गया है- वह है अधिकाधिक धन अर्जन करना, चाहे इसके लिये उसे अपनी आत्मा को बेचना ही क्यों न पड़े? वैदिक संस्कृति से संस्कारित व्यक्ति

छल-कपट या अन्याय से प्राप्त धन नहीं चाहता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी 'संस्कार विधि' में गृहाश्रम प्रकरण में लिखते हैं- चाहे कितना ही दु:ख पड़े, परन्तु अधर्म से धन संचय न करे।

(iii) लौकैषणा- इस संसार में स्वयं की प्रसिद्धि, यश-मान आदि की इच्छा करना और प्राप्त न होने पर दु:खी होना लोकैषणा कहलाता है। इन तीन ऐषणाओं में सबसे अधिक बलवान लोकैषणा है। मानव की यह ऐषणा-शक्ति जीवन में महान् प्रेरणा का कार्य भी करती है। यदि इसका दमन कर दिया जाये तो मानसिक कुण्ठायें उत्पन्न हो जाती है जो समाज के लिये घातक तथा विनाशकारी हो सकती है। अत: सीमित स्थिति अर्थात् अपनी सीमा के अन्तर्गत यह ऐषणा मानव को उन्नत भी करती है, परन्तु इसकी अति मानव के लिये विनाशकारी ही होती है।

श्रेय पथ के पथिक को इन तीनों ऐषणाओं पर विजय प्राप्त करनी होगी। यह त्याग और सेवा की भावना से ही विजित हो सकती है। इन ऐषणाओं से मुक्ति का मार्ग यही है कि मनुष्य जान जाये कि ये भौतिक भोग पदार्थ अस्थिर तथा नश्वर हैं और वह इनका स्वामी नहीं है तथा यह भी जान ले कि भौतिक भोग-पदार्थों से मानव को तृप्ति, शान्ति कभी नहीं मिल सकती। हाँ इनका उपयोग यजुर्वेद के ४० वें अध्याय के प्रथम मन्त्र के आधार पर **(तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा, मा गृध: कस्यस्विद्धनम्)** होगा तो व्यक्ति श्रेय मार्ग की ओर बढ़ जायेगा।

आत्मा की उन्नति व अवनति का कारण मन तथा इन्द्रियाँ है। इन्द्रियाँ मनुष्य की मित्र भी हैं और शत्रु भी। जब वे नियन्त्रण में रहती हैं तो मानव को श्रेय मार्ग की ओर ले जाती है। जब आत्मा बुद्धिरूपी सारथी के माध्यम से मनरूपी लगाम से इन्द्रिय रूपी घोड़ों को को विषय भोगों से हटाकर अध्यात्म मार्ग की ओर चलाता है, तभी वह मोक्ष मार्ग का पथिक बनता है।

सभी क्लेशों, ऐषणाओं पर नियन्त्रण तब होगा जब हमारा विवेक जाग्रत होगा। ये विवेक योगदर्शन के अनुसार अभ्यास और वैराग्य द्वारा सम्भव है। शुद्ध ज्ञान प्राप्त कर, शुद्ध कर्म करना होगा। इसके लिये योगाभ्यास करना होगा, तभी हम सच्चे श्रेय के पथिक बन सकेंगे। परमपिता परमात्मा से प्रार्थना है कि वह हमें इस मार्ग पर चलाकर हमें हमारे जीवन के परम लक्ष्य मोक्ष-प्राप्ति का अधिकारी बनाये। इसी में हमारे जीवन की सार्थकता है।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

एक आहुति अपने आचार्य के लिए.....

ऋषि दयानन्द की उत्तराधिकारिणी परोपकारिणी सभा की तन, मन, धन से सेवा करने वाले, उसे अपनी मातृवत् समझने वाले और यहाँ तक कि अपना जीवन समर्पित कर देने वाले डॉ. धर्मवीर आज अपना समस्त भार आर्य जनता अर्थात् अपने उत्तराधिकारियों पर छोड़ गये हैं। उन्होंने ऋषि के स्वप्नों को अपना कर्त्तव्य समझकर सभा को गगनचुंबी ऊँचाइयों तक पहुँचाया। अनेक नये प्रकल्प चलाये यथा-वैदिक गुरुकुल, गोशाला, आश्रम, अतिथियों के ठहरने व खान-पान की नि:शुल्क व्यवस्था आदि। उन्होंने जो-जो कार्य छेड़े उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति में कभी न्यूनता न आने दी। परोपकारिणी सभा ऐसे पुत्र को प्राप्त कर गौरव का अनुभव करती है और बिछुड़कर शोकग्रस्त होने का भी। उनके द्वारा शुरु किये कार्य कभी शिथिल न पड़ें, इस कारण **सभा ने डॉ. धर्मवीर जी की स्मृति में एक करोड़ रु. की स्थिर निधि बनाने का संकल्प लिया है,** जिससे कि धन धर्म के काम आ सके। इसमें सन्देह नहीं कि ये समस्त कार्य आर्य जनता के सहयोग से ही प्रारम्भ हो सके हैं और सहयोग से ही चल भी रहे हैं। इसलिये इसमें भी सन्देह नहीं कि सभा के इस संकल्प को आर्य जनता शीघ्र पूर्णता की ओर पहुँचा देगी और शायद उससे भी कहीं बढ़कर। यज्ञ तो हवि माँगता है। बिना हवि के यज्ञ की कल्पना भी क्या? बस देरी तो सूचित होने की है। हवि बनना तो आर्यों के खून में है, तन से, मन से अथवा धन से।

आप अपना दान चैक, ड्राफ्ट या सभा के खाते में सीधे भी भेज सकते हैं। कृपया, राशि भेजने के पश्चात् सभा में दूरभाष या पत्र द्वारा अवश्य सूचित कर दें। - **कन्हैयालाल आर्य - मन्त्री**

(परोपकारिणी सभा द्वारा संचालित)

योग-साधना एवं स्वाध्याय शिविर

परिवर्तित दिनांक : ०३ से १० अक्टूबर २०२१

आज समाज के अनेक क्षेत्रों में अनेक प्रकार से लोग साधना के लिए प्रयासरत हो रहे हैं। अनेक प्रशिक्षकों द्वारा इस विषयक ज्ञान-विज्ञान भी प्रदान किया जा रहा है। फिर भी साधकों को साधना की सन्तुष्टिदायक स्थिति प्राप्त नहीं हो पा रही है। इसका कारण है कि साधना के विषय **साध्य, साधन, साधक व अन्य साधक-बाधकों** के ज्ञान का वैदिक परम्परा से दूर होना। इस योग-साधना शिविर में इन्हीं विषयों का वैदिक-दर्शनों के द्वारा ज्ञान करवाया जायेगा, उससे सम्बन्धित जिज्ञासाओं का समाधान व आत्मनिरीक्षण के द्वारा अपनी उन्नति का मापदण्ड बताया जायेगा। यह शिविर अवश्य ही आपकी साधना की उन्नति में विशेष साधन बनेगा, जिससे कि मानव जीवन के मुख्य व चरम लक्ष्य की प्राप्ति उत्तरोत्तर काल में आप अपने निकट अनुभव करने लगेंगे।

प्रार्थियों हेतु नियम व अनुशासन

१. प्रत्येक प्रार्थी के लिए पूर्ण मौन अनिवार्य होगा।
२. शिविर के काल में किसी साधक के द्वारा नियम व अनुशासन भंग करने पर उसे शिविर के मध्य में ही शिविर छोड़ने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
३. पूरे शिविर में साधक के द्वारा किसी भी माध्यम से बाह्य-सम्पर्क करना निषिद्ध रहेगा।
४. शिविर काल में किसी भी साधक को ऋषि उद्यान परिसर से बाहर जाने की अनुमति नहीं होगी।
५. साधकों की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति ऋषि-उद्यान परिसर में ही की जायेगी।
६. बाह्य-वृत्ति उत्पादक साधनों जैसे- समाचार-पत्र पढ़ना, आकाशवाणी श्रवण व दूरदर्शन देखने आदि पर पूर्ण प्रतिबन्ध रहेगा।
७. शिविरार्थी कोरोना वैक्सीनेशन की दोनों डोज़ का प्रमाण-पत्र साथ लायें।
८. बच्चों को साथ लाये जाने पर प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जाएगा।
९. शिविर के प्रारम्भ दिन से लेकर समापन-सत्र पर्यन्त पूर्ण रूप से शिविर में भाग लेना अनिवार्य होगा।
१०. नियम व अनुशासन के पालन को आवेदन में ही लिखित स्वीकार करना होगा।

उपरिलिखित किसी भी नियम व अनुशासन का पालन करने में असमर्थ व अयोग्य प्रार्थी को शिविर में प्रवेश नहीं दिया जायेगा।

प्रार्थियों के लिए सूचनाएँ- परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर (राज.) कार्यालय से (०१४५-२४६०१६४) से संपर्क कर शिविर से पूर्व शुल्क जमा करवा कर अपने नाम का पंजीयन करा लें। शिविर में माता-बहिनें भी भाग ले सकती हैं। पुरुषों एवं महिलाओं के आवास की सामूहिक व्यवस्था पृथक्-पृथक् की जाती है। पृथक् कक्ष की व्यवस्था पूर्व सूचना व उपलब्धता के अनुसार की जाती है। ऋषि उद्यान में दरी, गद्दे, तकिए एवं बर्तन उपलब्ध हैं, शेष दैनिक उपयोग की वस्तुएँ यथा मंजन, ब्रश, साबुन, तेल, दवाएँ, बिछाने-ओढ़ने की चादरें, लिखने के लिए संचिका (नोटबुक), लेखनी, करदीप (टार्च) आदि को साधक अपने साथ लाएँ। वस्त्र सादगी एवं शिष्टाचार के अनुकूल हों, आभूषणों एवं सुगन्धित द्रव्यों का उपयोग न हो। आपके पास योगदर्शन हो तो साथ लाएँ। सतर्कता की दृष्टि से कीमती वस्तुएँ साथ न लायें। यदि आपको कोई संक्रामक रोग, तेज खांसी, दमा, मिर्गी आदि मानसिक रोग, वायु विकार या अन्य गंभीर रोग हो, तो कृपया शिविर में आना स्थगित रखें। लौटने का रेल-आरक्षण शिविर में आने से पूर्व करवा लें। अजमेर पहुँचने की सूचना घर पर देनी हो तो शिविर स्थल में प्रवेश से पहले दे देवें। खाने-पीने की वस्तुएँ साथ न लावें।

यह शिविर परोपकारिणी सभा, अजमेर के सौजन्य से आयोजित किया जा रहा है। शिविर शुल्क १५०० रु. मात्र जमा करना होगा। पृथक् कक्ष का शुल्क २००० रु. देय है। शिविर में भाग लेने वालों को शिविर के प्रारंभ दिनांक को सायं चार बजे तक शिविर स्थल ऋषि उद्यान, पुष्कर मार्ग, अजमेर (०१४५-२६२१२७०) में पहुँच जाना आवश्यक है क्योंकि इसी दिन शाम को शिविर के अनुशासन एवं विभिन्न व्यवस्थाओं संबन्धी महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ दी जाएँगी। शिविर का समापन अन्तिम दिन दोपहर एक बजे तक होगा। शिविर समाप्ति से पूर्व जाने की अनुमति नहीं दी जायेगी।

शिविर से आपका जीवन श्रेष्ठतर व पवित्रतर बने, इन्हीं शुभकामनाओं के साथ।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, केसरगंज, अजमेर दूरभाष : ०१४५-२४६०१६४

– : मार्ग : –

ऋषि उद्यान शिविर स्थल पर पहुंचने के लिए फॉयसागर की ओर जाने वाली सिटी बस या ऑटो-रिक्शा, रेलवे स्टेशन व बस स्टेण्ड से (वाया-आगरा गेट/फव्वारा चौराहा) सर्वदा सुलभ रहते हैं।

डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा, ९४१४००३४६८, संयोजक

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वावधान में

१३८ वाँ ऋषि बलिदान समारोह

दिनांक १२, १३, १४ नवम्बर २०२१, शुक्र, शनि, रविवार

विराट् व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण-अवसर ऋषि के १३८वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

अथर्ववेद पारायण यज्ञ- 'अथर्ववेद पारायण यज्ञ' की पूर्णाहुति बलिदान समारोह के अन्तिम दिन १४ नवम्बर को प्रातः १० बजे होगी। यज्ञ के ब्रह्मा आर्यजगत् के प्रतिष्ठित विद्वान् डॉ. रामप्रकाश वर्णी-गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार होंगे।

वेदगोष्ठी - प्रतिवर्ष की परम्परा के अनुसार इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ दिल्ली एवं अनुसन्धान केन्द्र परोपकारिणी सभा के संयुक्त प्रयास से वेदगोष्ठी का आयोजन किया जायेगा। इस गोष्ठी में देश के विविध विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेद।** जो विद्वान् गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं, वे २५ अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। १२, १३, १४ नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में २१ वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गत वर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। १३ नवम्बर को परीक्षा एवं १४ नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर २-छायाचित्र सहित अपना परिचय २५ अक्टूबर, २०२१ तक आचार्य महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, अजमेर के पते पर भेज दें।

सम्मान - प्रतिवर्ष विशिष्ट वैदिक विद्वान्, विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को इस समारोह में सम्मानित किया जाता है। इस वर्ष भी सम्मान - समारोह होगा। जिसमें अनेक विद्वान्-विदुषियों एवं कार्यकर्त्ताओं को सम्मानित किया जायेगा।

नवम्बर के आरम्भ में अजमेर में हल्की ठंड होने लगती हैं, ऋषि उद्यान खुले में होने से सर्दी का प्रभाव कुछ अधिक रहेगा। रात्रि में कम्बल ओढ़ने जैसी ठण्ड रहेगी। जो समूह में रहना चाहते हैं, उनकी निवास-व्यवस्था ऋषि उद्यान में होगी और जो अपने निवास की व्यवस्था होटल-धर्मशाला में करवाना चाहते हैं, कृपया वे सभा कार्यालय से पूर्व सम्पर्क कर अग्रिम राशि जमा करवा कर कमरा आरक्षित करवा लें। सभी से विशेष निवेदन है कि अपने आने की सूचना कम से कम एक सप्ताह पूर्व दे देवें, जिससे संख्या का अनुमान होकर तदनुसार व्यवस्था की जा सके। सभी से निवेदन है कि १३८वें बलिदान समारोह में अपने परिवार व समाज के सभी कार्यकर्त्ताओं सहित पधार कर महर्षि को हार्दिक श्रद्धांजलि प्रदान करें तथा महर्षि दयानन्द के स्वप्न को साकार करने हेतु प्रेरणा उत्साह प्राप्त कर प्रचार-प्रसार को एक नई चेतना प्रदान करें।

ऋषि मेले में आमन्त्रित विद्वान् एवं विशिष्ट अतिथि- आचार्य देवव्रत-महामहिम राज्यपाल गुजरात, स्वामी प्रणवानन्द सरस्वती-गुरुकुल गौतम नगर, देहली, स्वामी ऋतस्पति-होशंगाबाद, स्वामी देवव्रत-प्रधान संचालक सार्वदेशिक आर्यवीर दल, स्वामी विष्वङ् परिव्राजक-रोजड़, श्री सुरेश अग्रवाल-प्रधान सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु-अबोहर, पंजाब, डॉ. सुरेन्द्र कुमार-पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, प्रो. रामप्रकाश वर्णी, आचार्य सत्यजित्-रोजड़, आचार्य विरजानन्द दैवकरणि-झज्जर, डॉ. राजेन्द्र विद्यालंकार, प्रो. कमलेश चौकसी-अहमदाबाद, डॉ. रघुवीर वेदालंकार-दिल्ली, आचार्य डॉ. सूर्या देवी-शिवगंज, डॉ. महावीर मीमांसक-दिल्ली, डॉ. मुमुक्षु आर्य-नोएडा, ठाकुर विक्रमसिंह-दिल्ली, आचार्य विजयपाल-झज्जर, श्री इन्द्रजित् देव, श्री पुनीत शास्त्री-मेरठ, डॉ. जगदेव-रोहतक, श्री राजवीर आर्य, डॉ. सुरेन्द्र कुमार-रोहतक, श्री ओममुनि-ब्यावर, आचार्य ओमप्रकाश-गुरुकुल आबूपर्वत, डॉ. नयन कुमार-लातूर, महाराष्ट्र, आचार्या डॉ. धारणा याज्ञिकी, श्री धर्मपाल आर्य- प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा देहली, मास्टर रामपाल आर्य- प्रधान आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा, श्री विनय आर्य- मन्त्री आर्य प्रतिनिधि सभा देहली, श्री तपेन्द्र वेदालंकार-रिटा. आई.ए.एस., श्री सज्जनसिंह कोठारी-पूर्व लोकायुक्त, डॉ. दिनेशचन्द्र शर्मा-अजमेर, डॉ. वेदप्रकाश विद्यार्थी-अजमेर, श्री जयसिंह गहलोत-जोधपुर, श्री दीनदयाल गुप्ता-कोलकाता, श्री शत्रुघ्न आर्य-रांची, श्री सत्यानन्द आर्य-दिल्ली, श्री जगदीश शर्मा-जयपुर, श्री शिवकुमार चौधरी-इन्दौर, श्री जयदेव आर्य-राजकोट, श्री विजयसिंह भाटी-जोधपुर, श्री विजय शर्मा-भीलवाड़ा, श्री भूपेन्द्रसिंह आर्य-अलीगढ़, श्री दिनेश पथिक-अमृतसर, आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी-बिजनौर आदि।

इस समारोह हेतु आपका आर्थिक सहयोग आयकर की धारा '८०-जी' के अन्तर्गत दिए गये प्रावधान के अनुरूप कर मुक्त होगा। विदेश में निवास कर रहे धर्मप्रेमी सज्जन स्वदेश में होने वाले इस समारोह हेतु मुक्त हस्त से दान देकर देश का गौरव बढ़ाएँ। सभा को भारतीय शासन द्वारा विदेशों से दानस्वरूप दी गई राशि को प्राप्त करने की छूट प्राप्त है। आपका सहयोग ही हमारा सम्बल है। शुभकामनाओं सहित।

डॉ. वेदपाल
प्रधान

कन्हैयालाल आर्य
मन्त्री

ओ३म्

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) पिन. ३०५००१ दूरभाष- ०१४५-२४६०१६४

वेदगोष्ठी- १२, १३, १४ नवम्बर २०२१

विषय- महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेद

मान्यवर सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्भावी विद्वानों के सहयोग से सदा की भांति इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली तथा अनुसंधान विभाग परोपकारिणी सभा, अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध-पत्र परोपकारी व वेदपीठ की शोध-पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं। जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते वे भी लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। गत ३२ वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है। अब तक निम्नलिखित बिन्दुओं पर विचार किया जा चुका है:-

१. ऋषि दयानन्द की वेदभाष्य शैली	**१२ नवम्बर, १९८८**
२. वेद और कर्मकाण्डीय विनियोग	**०५ नवम्बर, १९८९**
३. अथर्ववेद समस्या और समाधान	**२७ नवम्बर, १९९०**
४. वेद और विदेशी विद्वान्	**१६ नवम्बर, १९९१**
५. वैदिक आख्यानों का वास्तविक स्वरूप	**०१ नवम्बर, १९९२**
६. वेदों के दार्शनिक विचार	**२८ नवम्बर, १९९३**
७. सोम का वैदिक स्वरूप	**१२ नवम्बर, १९९४**
८. पर्यावरण समस्या का वैदिक समाधान	**०३ नवम्बर, १९९५**
९. वैदिक समाज व्यवस्था	**०१ नवम्बर, १९९६**
१०. वेद और राष्ट्र	**२४ अक्टूबर, १९९७**
११. वेद और विज्ञान	**०९ अक्टूबर, १९९८**
१२. वेद और ज्योतिष	**१० नवम्बर, १९९९**
१३. वेद और पदार्थ विज्ञान	**०३ नवम्बर, २०००**
१४. वेद और निरुक्त	**१८ नवम्बर २००१**
१५. वेद में इतिहास नहीं	**०१ नवम्बर २००२**
१६. वेद में कृषि व वनस्पति विज्ञान	**३१ अक्टूबर २००३**
१७. वेद में शिल्प	**१९ नवम्बर २००४**
१८. वेदों में अध्यात्म	**११ नवम्बर, २००५**
१९. वेदों में राजनीतिक चिन्तन	**२७ नवम्बर, २००६**
२०. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है	**१६ नवम्बर, २००७**
२१. वैदिक समाज विज्ञान	**०५ नवम्बर, २००८**
२२. सत्यार्थप्रकाश का ७ वाँ समुल्लास व वेद	**२३ अक्टूबर, २००९**
२३. सत्यार्थप्रकाश का ८ वाँ समुल्लास व वेद	**१२ नवम्बर, २०१०**
२४. सत्यार्थप्रकाश का ९ वाँ समुल्लास व वेद	**०४ नवम्बर, २०११**
२५. महर्षिदयानन्दाभिमत मन्तव्यः वैदिक परिप्रेक्ष्य	**१६ नवम्बर, २०१२**
२६. वेद और सत्यार्थप्रकाश का १२वाँ समुल्लास	**८ नवम्बर, २०१३**
२७. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	**३१ अक्टू. १,२ नव., २०१४**
२८. भारतीय मत सम्प्रदाय और वेद	**२०,२१,२२ नव., २०१५**
२९. दयानन्द दर्शन की वेदमूलकता	**४,५,६ नव., २०१६**
३०. वेदों में शिक्षा के सिद्धान्त	**२७,२८,२९ अक्टू., २०१७**
३१. षड्दर्शनों की वेदमूलकता और महर्षि दयानन्द	**१६,१७,१८ नवम्बर., २०१८**
३२. वेद वर्णित ईश्वर-स्वरूप एवं नाम (ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव)	**०१,२,३ नवम्बर., २०१९**

ओ३म्

परोपकारिणी सभा

दयानन्द आश्रम, केसरगंज, अजमेर (राज.) ३०५००१ दूरभाष- ०१४५-२४६०१६४

वेदगोष्ठी-२०२१

विषय- महर्षि दयानन्द की ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका और वेद

मान्यवर सादर नमस्ते।

आशा करता हूँ कि आप स्वस्थ सानन्द होंगे। आपको सुविदित है कि सद्भावी विद्वानों के सहयोग से पूर्व की भांति इस वर्ष भी अन्तर्राष्ट्रीय दयानन्द वेदपीठ, दिल्ली तथा अनुसन्धान विभाग परोपकारिणी सभा, अजमेर के संयुक्त तत्त्वावधान में ऋषि मेले के अवसर पर वेदगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है। इस गोष्ठी में देश के अनेक भागों से पधारे प्रख्यात वैदिक विद्वान् निर्धारित विषयों पर अपने शोधपूर्ण विचार प्रस्तुत करते हैं। इनमें से चुने हुए शोध-पत्र परोपकारी व वेदपीठ की शोध-पत्रिका के माध्यम से प्रकाशित किये जाते हैं, जिससे जो लोग गोष्ठी में नहीं आ सकते वे भी लाभान्वित होते हैं। विद्वानों को भी इस विषय पर अधिक विचार करने का अवसर मिलता है। गत ३३ वर्षों से गोष्ठी का आयोजन निरन्तर किया जा रहा है।

वेदगोष्ठी के विषय-२०२१

१. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' का वैशिष्ट्य (उद्देश्य, महत्त्व एवं वैदिक साहित्य में उसका स्थान)
२. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' पर किए गए आक्षेप और उनका परिहार
३. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में वेदोत्पत्ति-प्रकरण पर विचार
४. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में वेदों का नित्यत्व पर विचार
५. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में वेदों के वर्ण्यविषयों पर विचार
६. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' के सन्दर्भ में 'वेद'-संज्ञा-विचार
७. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' के सन्दर्भ में वेदोक्तधर्म पर विचार
८. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' के सन्दर्भ में सृष्टिविद्या विषय पर विचार
९. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में उल्लिखित विविध विद्याओं/विज्ञान विषयों पर विचार
१०. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में वर्णित ब्रह्म, उपासना तथा मुक्ति-विषयों पर विचार
११. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में राजप्रजाधर्म-विषय पर वेदों के सन्दर्भ में विचार
१२. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' में वैदिक आख्यानों के यथार्थ स्वरूप पर विचार
१३. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' के आलोक में वेदों के चार प्रकार के विभाग, उनका क्रम, प्रयोजन इत्यादि पर विचार
१४. 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' की आर्षशैली का विभिन्न ऐतिहासिक, शास्त्रीय और तर्क, प्रमाणों एवं प्रसंगों से सुदृढ़ीकरण, पुष्टीकरण।
१५. महर्षि दयानन्द की 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' और सायणाचार्य की वेदभाष्य-भूमिकाओं पर तुलनात्मक विचार

सहायक ग्रन्थ

१. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (सम्पादक- पं. युधिष्ठिर मीमांसक)
२. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका (सम्पादक- पं. राजवीर शास्त्री)
३. भूमिका भास्करभूमिका (लेखक- स्वामी विद्यानन्द सरस्वती दो खण्ड)
४. वेदार्थकल्पद्रुम- ३ भाग (पं. विशुद्धानन्द आचार्य)
५. वेदार्थविमर्श: (वैद्य पं. ब्रह्मानन्द शर्मा)
६. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका- परिशिष्ट (पं. युधिष्ठिर मीमांसक)
७. चतुर्वेदभाष्य (विभिन्न आर्य भाष्यकार)
८. वेदांगग्रन्थ (विभिन्न भाष्य)
९. वेदों के उपांग ग्रन्थ (विभिन्न भाष्य)
१०. उपनिषद् भाष्य (विभिन्न लेखक)
११. श्रीमत्सायणाचार्य की विभिन्न वेदभाष्य-भूमिकाएँ।
१२. वैदिक आख्यानों का वैदिक स्वरूप (डॉ. सुरेन्द्र कुमार)
१३. वेद-भाष्यकारों की वेदार्थ-प्रक्रियायें (आचार्य रामनाथ जी)
१४. वेदों का यथार्थ स्वरूप (पं. धर्मदेव विद्यामार्त्तण्ड)
१५. क्या वेद में इतिहास है? (पं. जयदेव शर्मा)
१६. वैदिक इतिहासार्थ निर्णय (पं. शिवशंकर शर्मा)
१७. वैदिक इतिहास-विमर्श (आचार्य वैद्यनाथ शास्त्री)
१८. वैदिक सिद्धान्त-मीमांसा/प्रथम भाग (पं. युधिष्ठिर मीमांसक)
१९. यजुर्वेदभाष्य-विवरण (भूमिका) (पं. ब्रह्मदत्त स्नातक)
२०. वैदिक सम्पत्ति (पं. रघुनन्दन शर्मा)

(लेखक इसी प्रकार के अन्य सिद्धान्तग्रन्थों से सहायता ले सकते हैं)

परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा प्रकाशित पुस्तकों पर विशेष छूट

पुस्तक का नाम	वास्तविक मूल्य रुपये	छूट के साथ मूल्य रुपये
अष्टाध्यायी भाष्य (तीनों भाग)	५००	३५०
महर्षि दयानन्द सरस्वती का पत्र-व्यवहार (दोनों भाग)	८००	५००
कुल्लियाते आर्यमुसाफ़िर (दोनों भाग)	९५०	६००
डॉ. धर्मवीर का सम्पादकीय संकलन (तीन भाग)	५००	२५०
पण्डित आत्माराम अमृतसरी	१००	७०
महर्षि दयानन्द के शास्त्रार्थ	१५०	१००
वेद पथ के पथिक	२००	१००
महर्षि दयानन्द के हस्तलिखित-पत्र	२००	१००
स्तुतामया वरदा वेदमाता	१००	७०

यजुर्वेद भाष्य (महर्षि दयानन्द सरस्वती) पृष्ठ संख्या- २१९७, चारों भागों का मूल्य = १३००/-
डाक-व्यय सहित विशेष छूट पर उपलब्ध मूल्य = १०००/-

पुस्तकों हेतु सम्पर्क करें:- दूरभाष - 0145-2460120

वैदिक पुस्तकालय, अजमेर से क्रय की जाने वाली पुस्तकों की राशि ऑनलाइन जमा कराने हेतु

खाताधारक का नाम - **वैदिक पुस्तकालय, अजमेर।**

बैंक का नाम - **पंजाब नेशनल बैंक, कचहरी रोड, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या - **0008000100067176**

IFSC - PUNB0000800

लेखकों से निवेदन

- लेखक कृपया अपने मौलिक व अप्रकाशित लेख ही भेजें।
- लेखक अपना पूरा पता व चल-दूरभाष संख्या लेख के साथ अवश्य लिखें।
- परोपकारिणी सभा द्वारा रचनाओं के लिए किसी प्रकार का भुगतान नहीं किया जाता है।
- अपनी रचना की एक प्रति कृपया अपने पास रखकर भेजें, क्योंकि अस्वीकृत रचनायें डाक द्वारा लौटायी नहीं जाती हैं।
- रचना के प्रकाशन में छः माह या अधिक समय भी लग सकता है, अतः कृपया तब तक रचना को अन्यत्र न भेजें।
- स्वीकृत रचना परोपकारी के किसी आगामी अङ्क में देखी जा सकती है। **-सम्पादक**

जो विद्या की वृद्धि के लिए पठन-पाठन रूप यज्ञ कर्म्म करने वाला मनुष्य है वह अपने यज्ञ के अनुष्ठान से सब की पुष्टि तथा संतोष करने वाला होता है इससे ऐसा प्रयत्न सब मनुष्यों को करना उचित है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ७.२७

संस्था की ओर से....

क्या आप प्रतिदिन अतिथि यज्ञ नहीं कर पाते?
तो आइये, अतिथि यज्ञ के होता बनिये

वैदिक नित्यकर्मों में अतिथि यज्ञ प्रतिदिन करना अनिवार्य है, किन्तु आपको प्रतिदिन अतिथि मिलना संभव नहीं, फिर अतिथि यज्ञ कैसे किया जाय? इसका उपाय है, कुछ राशि प्रतिदिन अतिथि यज्ञ के नाम से निकाल ली जाये और उसको एकत्र कर अतिथि सत्कार में गुरुकुल में भोजन आदि के सहयोग में दे दी जाय।

यह अल्प राशि आप दैनिक संचय घट में जमा भी कर सकते हैं, वर्ष में लोग अरबों रुपए आग में पटाखे जलाकर व्यय करते हैं, असावधानी से बिजली जलती छोड़ इसे गंवा देते हैं आदि ऐसी छोटी-छोटी असावधानियों को रोक कर हम उसकी बचत राशि इस पावन कृत्य हेतु सभा को वर्ष में आसानी से दे सकते हैं।

सभा के धार्मिक क्रियाकलापों एवं आवासीय स्थल ऋषि उद्यान में उपर्युक्त पावन क्रियाकलाप लम्बे समय तक अबाध चलते रहें, इसके लिए सभा की योजना है कि प्रतिदिन प्रतिवर्ष ५ हजार एक सौ रु. की राशि प्रदान करने वाले उदार यशस्वी दानदाताओं का नाम अतिथि यज्ञ के स्थायी सदस्यों में अंकित किया जाता है ऐसे सज्जनों के नाम का परोपकारी में प्रकाशित भी किये जाते हैं।

यदि अपने सामर्थ्य के अनुसार राशि को न्यूनाधिक करना चाहें तो आपकी स्वतन्त्रता है अधिक से अधिक लोग परोपकारिणी सभा से जुड़ सकें, आप ऐसा करके ऋषि दयानन्द के कार्यों को आगे बढ़ाने में सहायक होंगे इसलिए ऐसी राशि निश्चित की है। आप से प्रार्थना है अपना नाम पता और संकल्प लिखकर अवगत करायें और अतिथि यज्ञ के होता बनें। अपनी राशि प्रतिमाह अथवा सुविधानुसार मनीआर्डर/डीडी/चैक द्वारा अथवा स्वयं उपस्थित होकर कार्यालय में जमा करा सकते हैं। आपका दान ८०जी (आयकर की धारा) के अंतर्गत कर मुक्त होगा।

अनेक 'अतिथि यज्ञ के होता' सदस्यों का आग्रह है, निश्चित तिथि जन्मदिन, विवाह वर्षगांठ या विशेष अवसर पर वे अपनी ओर से संस्था में भोजन कराना चाहते हैं। ऐसे महानुभावों से निवेदन है कि वे अतिथि यज्ञ के होता के रूप में एक दिन के भोजन व्यय की राशि लगभग पाँच हजार एक सौ रुपये भेजते हुए इच्छित दिन का विवरण सूचित करेंगे तो उन्हें उनके जन्मदिवस आदि पर परोपकारिणी सभा की ओर से दूरभाष द्वारा आशीर्वाद प्रदान किया जायेगा। यदि उस शुभ अवसर पर वे स्वयं उपस्थित होकर यजमान बनें तो यह सर्वोत्तम होगा।

अतिथि-यज्ञ के होताओं से अनुरोध

अतिथि-यज्ञ के होताओं से उनकी वैवाहिक वर्षगाँठ अथवा जन्मदिन व विभिन्न अवसरों पर ५१०० रु. प्रतिवर्ष सभा को प्राप्त होते रहते हैं। जो महानुभाव संकल्प के साथ इस पुनीत कार्य से जुड़े हुए हैं, उनसे हमारा अनुरोध है कि वे अपनी राशि भेजते समय **जन्मतिथि/वैवाहिक वर्षगाँठ आदि व दूरभाष संख्या** सूचित करना न भूलें। साथ ही यह भी अवश्य सूचित करा देवें कि पहले से भिजवा रहे हैं अथवा नया शुरू किया है। आप अपनी राशि सभा के बैंक खाते में नकद अथवा चैक द्वारा जमा करा सकते हैं।

परोपकारिणी सभा की गतिविधियाँ

परोपकारिणी सभा महर्षि दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित उनकी उत्तराधिकारिणी सभा है और केवल नाम से ही नहीं, बल्कि अपने कार्यों से भी वह ऋषि के उत्तराधिकार के दायित्व को पूर्णतया निभा रही है। महर्षि दयानन्द सरस्वती

ने इस सभा की स्थापना के समय तीन उद्देश्य रखे थे।

१. वेदादि सत्यशास्त्रों का प्रकाशन २. विद्वान् उपदेशक तैयार करके देश-विदेश में वैदिक धर्म का प्रचार एवं ३. आर्यावर्त्तीय दीन-दरिद्रों की सेवा।

इन सभी कार्यों को सभा अपने विभिन्न प्रकल्पों के माध्यम से पूरा करने में सर्वसामर्थ्य से लगी हुई है। यद्यपि सभा के पास आर्थिक आय का कोई स्थाई माध्यम नहीं है, पुनरपि ऋषिभक्तों एवं आर्यजनों के सहयोग और विश्वास पर ही सभा ने बड़े-बड़े कार्यों को प्रारम्भ किया और निरन्तर कर भी रही है। आचार्य डॉ. धर्मवीर जी, जो कि वर्तमान में परोपकारिणी सभा के प्रधान एवं मूल स्तम्भ थे, उनका कहना था कि **''कार्य यदि अच्छा है तो उसे प्रारम्भ कर देना चाहिये, सहयोग तो स्वयं ही मिल जाता है।''** यही शैली अपनाकर आज भी वैदिक विचार के प्रचार का कार्य निरन्तर जारी है। डॉ. धर्मवीर जी के जाने से सभा को बड़ा आघात अवश्य लगा है, परन्तु आर्यों का स्नेह, भरोसा उनके द्वारा प्रारम्भ किये गये कार्यों को रुकने नहीं देगा-ऐसा सभा को पूर्ण विश्वास है।

परोपकारिणी सभा आज अनेक कार्यों, माध्यमों से इस वेद प्रचार यज्ञ में लगी है, जिसकी सूची यहाँ दी जा रही है-

भव्य ऋषि उद्यान आश्रम, अतिथि यज्ञ, भोजनशाला, गौशाला, वानप्रस्थ एवं संन्यासाश्रम, गुरुकुल, परोपकारी पत्रिका, प्रकाशन, योग साधना एवं चरित्र निर्माण शिविर, सत्यार्थ प्रकाश व ऋषि जीवन चरित्र का नि:शुल्क वितरण, पाण्डुलिपियों का डिजिटलाइजेशन, पुस्तकालय, औषधालय, देश-देशान्तरों में वेद-प्रचार, आयुर्वेदिक औषधालय।

गुरुकुल के लिये प्रवेश-सूचना

परोपकारिणी सभा, अजमेर द्वारा संचालित महर्षि दयानन्द आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान-अजमेर में वैदिक धर्म एवं आर्यसमाज के उपदेशक तैयार करने हेतु उपदेशक कक्षा में प्रवेश प्रारम्भ हैं।

प्रवेशार्थी की न्यूनतम आयु १४ वर्ष तथा कक्षा आठ या उससे अधिक उत्तीर्ण हो। आर्ष-पद्धति से संस्कृत व्याकरण, दर्शन, उपनिषद्, वक्तृत्व कला तथा महर्षि निर्दिष्ट पाठ्यक्रम के अध्यापन की व्यवस्था है।

गुरुकुल में अध्यापन, भोजन एवं आवास **नि:शुल्क** है।

प्रवेश के इच्छुक अभ्यर्थी सम्पर्क करें-

आचार्य, आर्ष गुरुकुल, ऋषि उद्यान, पुष्कर रोड, अजमेर।

दूरभाष- ०८८२४१४७०७४, ०१४५-२४६०१६४, ०१४५-२६२१२७०

परोपकारिणी सभा के प्रकल्पों में सहयोग करने हेतु

खाताधारक का नाम - परोपकारिणी सभा, अजमेर (PAROPKARINI SABHA AJMER)

१. बैंक का नाम-**भारतीय स्टेट बैंक, डिग्गी चौक, अजमेर।**

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**10158172715**

IFSC-SBIN0031588

२. बैंक का नाम-**आई.डी.बी.आई**, पावर हाउस के सामने, जयपुर रोड, अजमेर।

बैंक बचत खाता **(Savings)** संख्या-**091104000057530**

IFSC-IBKL0000091 email : psabhaa@gmail.com

दानदाताओं की सूची

अतिथि यज्ञ के होता

(१६ से ३१ अगस्त २०२१ तक)

१. श्री छोगमल चौधरी चेरिटेबिल ट्रस्ट, इन्दौर २. श्री शिवकुमार चौधरी, इन्दौर ३. मास्टर अर्णव अग्रवाल, इन्दौर ४. श्री रवि एवं श्रीमती ऋचा अग्रवाल, इन्दौर ५. सुश्री अनन्या अग्रवाल, इन्दौर ६. श्रीमती प्रेरणा चौधरी, इन्दौर ७. श्रीमती सुषमा चौधरी, इन्दौर ८. श्री श्रेयस चौधरी, इन्दौर ९. सुश्री श्रेयसी चौधरी, इन्दौर १०. मास्टर सुविज्ञ चौधरी, इन्दौर ११. श्री प्रियव्रत आर्य, नई दिल्ली १२. श्री गौरव गुप्ता, विशाखापट्टनम १३. श्री नरपतसिंह आर्य, भीनमाल १४. श्री टेका महाशय, झज्जर।

गोभक्तों से निवेदन

ऋषि-उद्यान में परमार्थ हेतु गोशाला संचालित है। गोशाला की गौवों के दूध का वितरण सभी गुरुकुलवासियों, संन्यासियों एवं आगन्तुक अतिथियों में नि:शुल्क किया जाता है। आप सभी गो-भक्तों एवं उदारमना दानदाताओं से सभा का निवेदन है कि गौवों को उत्तम चारा मिले, इसके लिए जो भी सज्जन चारा दान देना चाहें उनका स्वागत है। यदि आप दूरस्थ प्रदेश के हैं तो कृपया चारे हेतु अनुमानित राशि सभा को ड्राफ्ट/चैक/नगद भेज सकते हैं। यशस्वी दानदाताओं के नाम परोपकारी पत्रिका में प्रकाशित किए जाएँगे। आपका दान गौवों के संवर्धन में सहायक होगा।

ऋषि-उद्यान में संचालित गोशाला के दानदाता

(१६ से ३१ अगस्त २०२१ तक)

१. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैण्ट २. श्रीमती सुन्दर देवी, अजमेर ३. श्री पंकज दीवान, दिल्ली ४. श्रीमती शान्ति चौहान, अजमेर ५. श्रीमती गीता देवी चौहान, अजमेर ६. श्री माणकचन्द जैन, छोटी खाटु ७. श्री हरसहाय सिंह गंगवार, बरेली।

अन्य प्रकल्पों हेतु सहयोग राशि

१. श्री ऋषभ गुप्ता, अम्बाला कैण्ट २. श्री प्रियव्रत आर्य, नई दिल्ली ३. श्री सुमेरसिंह, पलवल ४. श्रीमती अपर्णा एवं डॉ. अभय कुमार शुक्ला, पुणे ८. श्रीमती स्वर्णलता भसीन, नांगल टाउनशिप ९. श्री आर. सत्यानारायण रेड्डी, हैदराबाद १०. डॉ. एस. हैनिमी रेड्डी, नरसाराव पेठ ११. श्री चन्द्रसेन हरिसिंघानी १२. श्रीमती निधि आर्य, बैंगलोर।

शोक समाचार

परोपकारिणी सभा के कर्मठ एवं निष्ठावान् कर्मचारी श्री गोपालसिंह का हृदयाघात होने से दिनांक ३१ अगस्त २०२१ को आकस्मिक निधन हो गया। उनका अन्तिम संस्कार वैदिक रीति से सम्पन्न हुआ। श्री गोपालसिंह अपने पीछे भरापूरा परिवार छोड़कर गये हैं।

परोपकारी परिवार की ओर से हार्दिक श्रद्धाञ्जलि।

'सत्यार्थ प्रकाश' एवं 'महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र' प्रचार महायज्ञ में आपकी आहुति

महर्षि दयानन्द सरस्वती का अमर ग्रन्थ 'सत्यार्थप्रकाश' आर्यों का ब्रह्मास्त्र है। ऐसा ब्रह्मास्त्र, जिसने अविवेक, पाखण्ड, अन्धविश्वासों का दमन कर समाज में एक नई क्रान्ति 'वैचारिक क्रान्ति' को जन्म दिया। अन्धश्रद्धा, अविवेक और पाखण्ड मानव समाज में सहज ही पनपने वाली समस्या है, इसलिये प्रत्येक काल, प्रत्येक स्थान और प्रत्येक परिस्थिति में इन समस्याओं के उन्मूलन की आवश्यकता है-अत: 'सत्यार्थ प्रकाश' की आवश्यकता भी सदैव ही अनिवार्य रहेगी, परन्तु यह विचार जन-जन तक पहुँचे, तो ही लाभकारी होगा। इसी को ध्यान में रखते हुए परोपकारिणी सभा ने ७ वर्ष पूर्व 'विश्व पुस्तक मेला' दिल्ली में प्रतिवर्ष 'सत्यार्थप्रकाश' के साथ 'महर्षि का जीवन-चरित्र' एवं 'आर्याभिविनय' पुस्तक का नि:शुल्क वितरण करने की योजना बनाई, जो निरन्तर चल रही है। इस कार्य के परिणाम भी बहुत सुखद रूप में सामने आये हैं। पुस्तक में कई व्यक्ति आकर कहते हैं कि हमारे पास यह पुस्तक है, हम पिछले वर्ष ले गये थे।

प्रत्येक आर्यमात्र की यह इच्छा होगी कि वह भी इस ग्रन्थ को वितरित कर पुण्य का भागी बने। इसके लिये सभा प्रत्येक आर्य को इस महायज्ञ में सम्मिलित करना चाहती है। प्रत्येक व्यक्ति यज्ञ में अपनी आहुति दे तो यज्ञ और अधिक भव्य एवं विस्तृत हो जाता है। 'सत्यार्थप्रकाश' 'महर्षि दयानन्द जीवन-चरित्र' के नि:शुल्क वितरण रूपी यज्ञ में अपनी आहुति देने के लिये आप अपने सामर्थ्यानुसार सहयोग दे सकते हैं। परोपकारिणी सभा की ओर से ये पुस्तकें बड़े अक्षरों में, बढ़िया कागज पर, सजिल्द छापी जाती हैं, जिससे नये व्यक्ति के लिये भी पुस्तक संग्रहणीय बन जाती है। एक सैट की छपाई का खर्च लगभग १५० रु. आता है। **यदि कोई व्यक्ति अपनी सात्त्विक भावना से केवल २० पुस्तकें (इससे अधिक कितनी भी) ही वितरित करवाना चाहता है, तो सभा उतनी प्रतियों पर दानी व्यक्ति का नाम छपवाकर वितरित करेगी। इसी प्रकार ३०, ५०, १००, १००० आदि।**

१५० रु. प्रति के अनुसार आप दान देकर अपनी ओर से, अपने नाम से पुस्तक वितरित करा सकते हैं। आहुतियाँ जितनी अधिक होंगी, यज्ञ का फल भी उतना ही अधिक होगा।

अपने दान के साथ 'सत्यार्थप्रकाश वितरण' अवश्य लिख देवें, और साथ ही अपना नाम एवं पता भी। यह दान आप परोपकारिणी सभा के खाते में ऑनलाइन, चैक द्वारा या फिर परोपकारिणी सभा के पते पर मनिऑर्डर भी कर सकते हैं। यह यज्ञ आपका है, प्रत्येक आर्य का है। अत: प्रत्येक आर्य इसमें अपनी आहुति अवश्य दे।

न्यूनतम	२० प्रतियाँ	३०००/- रु.
	३० प्रतियाँ	४५००/- रु.
	५० प्रतियाँ	७५००/- रु.
	१०० प्रतियाँ	१५०००/- रु.
	५०० प्रतियाँ	७५०००/- रु.
	१००० प्रतियाँ	१,५०,०००/- रु.

इस प्रकार जितनी अधिक प्रतियाँ बाँटना चाहें, उतनी और दूरभाष संख्या के साथ भेज देवें। दान अक्टूबर माह के अन्त तक भिजवा देवें, ताकि प्रतियों की संख्या निर्धारित करके उन पर दानदाताओं का नाम अंकित किया जा सके। धन्यवाद।

मन्त्री, परोपकारिणी सभा, अजमेर

जैसे वेद के वेत्ता विद्वान् लोग वेदानुकूल मार्ग से परमेश्वर को जानकर उत्तम ज्ञान से उसका सेवन करते हैं वैसे ही जगदीश्वर सबको उपासनीय अर्थात् सेवन करने के योग्य है, वैसे ज्ञान के विना ईश्वर की उपासना कभी नहीं हो सकती क्योंकि विज्ञान ही उसकी अवधि है।

-महर्षि दयानन्द, यजुर्वेद, भावार्थ ८.४